मूल्य: ₹30

सितम्बर–अक्टूबर 2021

आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

फल फूल

भाकृअनुप
ICAR

www.icar.org.in

भारत में दुनिया के सबसे महंगे आमों की बागवानी

भारतीय आम सुगंध और स्वाद की एक विस्तृत विविधता के साथ विभिन्न आकार, आकृति और रंगों में मिलते हैं। आम एक विशिष्ट उत्पाद है, जो उच्च गुणवत्ता और पोषक तत्वों से प्रकृति द्वारा भरा गया है। केवल एक आम दैनिक आहार की 40 प्रतिशत जरूरतों को पूरा कर सकता है। यह हृदय रोग, कैंसर और कोलेस्ट्रॉल निर्माण को रोकने के लिए प्रतिरक्षक के रूप में कार्य करता है। कृषि और प्रसंस्करित खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) की रिपोर्ट के मुताबिक देश में आम की लगभग 1000 किस्में पायी जाती हैं। आम की स्थानीय किस्मों में से कुछ ऐसी किस्में भी हैं, जो दक्षिण भारत के राज्यों में वर्षभर फल देती हैं। भारत में आम की देसी और स्थानीय संकर प्रजातियों के अलावा आजकल विदेशी किस्मों की भी खेती सफलतापूर्वक की जा रही है।

आम को फलों का राजा कहा जाता है। भारत में कई प्रकार के आम पाए जाते हैं, लेकिन आजकल देश में एक आम बहुत चर्चा में है। इसे दुनिया के सबसे महंगे आमों में शुमार किया जाता है। इस आम का नाम **मियाजाकी** है। रिपोर्ट्स के मुताबिक, यह दुनिया की सबसे महंगी आम की किस्म है। इसे 'ताइयो-नो-टोमागो' या 'एग्स ऑफ सनशाइन' के नाम से भी जाना जाता है। आम की सामान्य किस्में हरे और पीले रंग की होती हैं, लेकिन मियाजाकी का रंग गहरा लाल है। इसका आकार डायनासोर के अंडे की तरह दिखता है। इस आम की खेती जापान के शहर मियाजाकी में की जाती है। मियाजाकी आम का वजन 350 ग्राम होता है। इसमें 15 फीसदी से अधिक चीनी होती है। हाल ही में आई एक रिपोर्ट के अनुसार, मध्य प्रदेश के जबलपुर में एक बागवान दंपति ने दावा किया कि उन्होंने आम की इस किस्म को उगाया है। इन अनोखे आम की सुरक्षा के लिए उन्होंने चार सुरक्षाकर्मी और सात कुत्ते तैनात किए थे, जिसको लेकर यह आम देशभर में चर्चा का केन्द्र बन गया था। विशेषज्ञों की मानें तो मियाजाकी आम को तैयार करने के लिए लंबे समय तक सूर्य की रोशनी की जरूरत पड़ती है। इसके साथ ही गर्म मौसम और अत्यधिक वर्षा की आवश्यकता भी होती है। इस आम की सुरक्षा के लिए चारों तरफ नेट लगाया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि मियाजाकी शहर में इस आम की खेती वर्ष 1984 से की जा रही है। इस आम का सीजन अप्रैल से लेकर अगस्त तक है। वहीं, बाजार में यह मई से लेकर जून में उपलब्ध रहता है। मियाजाकी आम को प्रीमियम फल कहा जाता है। जापान में यह सबसे महंगा आम है। जापान के अलावा भारत, थाईलैंड और फिलीपींस में भी यह आम पाया जाता है। रिपोर्ट के अनुसार इस वर्ष अंतर्राष्ट्रीय बाजार में यह आम काफी महंगा बिका है। ■

राज्यों में आम की प्रमुख व्यावसायिक किस्में

- **आंध्र प्रदेश:** बंगनापल्ली, सुवर्णरेखा, नीलम और तोतापरी
- **बिहार:** बॉम्बे ग्रीन, चौसा, दशहरी, फजली, गुलाबखास, किशन भोग, हिमसागर, जरदालू और लंगड़ा
- **गुजरात:** केसर, अलफांसो, राजापुरी, जमादार, तोतापरी, नीलम, दशहरी और लंगड़ा

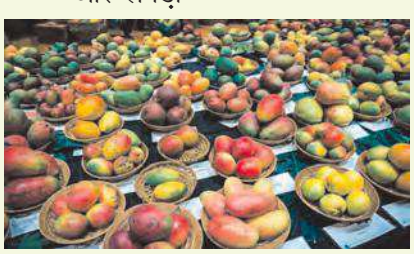

- **हरियाणा:** चौसा, दशहरी, लंगड़ा और फजली
- **हिमाचल प्रदेश:** चौसा, दशहरी और लंगड़ा
- **कर्नाटक:** अलफांसो, तोतापरी, बंगनापल्ली, पैरी, नीलम और मुलगोवा
- **मध्य प्रदेश:** अलफांसो, बॉम्बे ग्रीन, दशहरी, फजली, लंगड़ा और नीलम
- **महाराष्ट्र:** अलफांसो, केसर और पैरी
- **पंजाब:** चौसा, दशहरी और माल्दा
- **राजस्थान:** बॉम्बे ग्रीन, चौसा, दशहरी और लंगड़ा
- **उत्तर प्रदेश:** बॉम्बे ग्रीन, चौसा, दशहरी और लंगड़ा

1200 रुपए में बिक रहा एक आम

इस मौसम में इस देश में विभिन्न प्रकार के आमों की बहार है, लेकिन आमों की मलिका 'नूरजहां' अपने वजन और मूल्य को लेकर सबसे ज्यादा चर्चा में है। 'नूरजहां' आम, का एक नग 1200 रुपए तक में बिक रहा है। 'नूरजहां' किस्म का एक आम 3 कि.ग्रा. से भी ज्यादा वजन का होता है। विशेषज्ञों के अनुसार यह आम सबसे पहले अफगानिस्तान में पैदा हुआ था। नूरजहां (वर्ष 1577-1645) मुगलकाल की एक ताकतवर रानी थीं। उन्हीं के नाम पर इस आम को यह नाम दिया गया। भारत में यह आम मध्य प्रदेश और गुजरात में उत्पादित किया जाता है।

प्रस्तुति: **अश्वनी कुमार निगम**

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष: 42, अंक: 5, सितम्बर-अक्टूबर 2021

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. सतेन्द्र कुमार सिंह** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक
   भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — **सदस्य**
   पूर्व डीन
   भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — **सदस्य**
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक
अशोक सिंह
संपादन सहयोग
सुनीता अरोड़ा

प्रभारी (उत्पादन एकक)
पुनीत भसीन
मुख्य तकनीकी अधिकारी
अशोक शास्त्री

प्रभारी (व्यवसाय एकक)
जे.पी. उपाध्ये

दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12

एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00

E-mail : phalphul@gmail.com

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें।

विषय सूची

संपादकीय **वैज्ञानिक कृषि ज्ञान तथा प्रशिक्षण की उपयोगिता**–अशोक सिंह

बचाव 4
फलदार फसलों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव
सतीश भागवतराव आहेर, बृज लाल लकारिया **और** नारायण लाल

आमदनी 7
पपीते की खेती है लाभकारी
सुरेंदर कुमार, कर्म वीर, अंजीत कुमार, प्रदीप कुमार, नबीन कुमार दास **और** एम. मधु

प्रबंधन 9
पान के प्रमुख रोग एवं निवारण
सिद्धार्थ सिंह, सौमिक मुखर्जी, बन्दना मयंगलम्बम् **और** गौतम मंडल

नर्सरी 11
वैज्ञानिक तकनीक से सब्जी पौध उत्पादन
अभिषेक प्रताप सिंह **और** मनोज कुमार रॉय

औषधीय पादप 13
कैमोमाइल है एक तनाव निवारक चाय
एम.एल. मेहरिया **और** हितेश बोराणा

पद्धति 16
मिर्च उत्पादन की उन्नत तकनीक
सन्तोष चौधरी, नन्द किशोर जाट, महेश चौधरी, अनोप कुमारी **और** गोगराज सिंह जाट

मुनाफा 21
गुणवत्तायुक्त सब्जी पौध उत्पादन से बेहतर आय
निधि त्यागी **और** अशोक कुमार गुप्ता

तकनीक 26
उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में विदेशी सब्जी उत्पादन
अंकित, सुनील कुमार सिंह, अजिताभ बोरा, बैकुंठ ज्योति गोगई **और** संजय कुमार द्विवेदी

नया ट्रेंड 30
विदेशियों को भा रहे हैं भारतीय फल और फूल

प्रसंस्करण 31
अंगूर से किशमिश उत्पादन
गीतिका सिंह

विषय-सूची

रोकथाम 33
आलू में तना ऊतक क्षय रोग का प्रबंधन
डी.एल. यादव, बी.एल. नागर, प्रताप सिंह **और** प्रतीक जैसानी

विधि 34
गेंदा खेती की तकनीक
जगदीश कुमार, केशव खुंटिया, सचिन सिन्हा **और** वेद प्रकाश

नियंत्रण 36
टमाटर में म्लानि रोग की पहचान तथा बचाव
राम निवास, दीपक मौर्या, अंकित कुमार पाण्डेय **और** सम्पूर्णानंद सिंह

महत्व 38
स्वदेशी फलों की उपयोगिता एवं खेती
इंदिरा देवी

उद्यम 41
ईसबगोल की जैविक खेती है लाभकारी
मोती लाल मीणा, ऐश्वर्य डूडी **और** धीरज सिंह

कुछ अलग 44
चिकनी तोरई की व्यावसायिक खेती
एस.के. सिंह, एस.के. खरे, यू.एस. धाकड़ **और** बी.एस. किरार

व्यावसायिक फसल 47
शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में मेंहदी की खेती
एम.बी. नूर मोहम्मद, ए.के. शुक्ला, कमला कुमारी चौधरी, कीर्तिका ए., दीपक कुमार गुप्ता **और** सीता राम मीणा

विशेष 51
बहुमूल्य सब्जी है ककोड़ा
एस.के. बैरवा, एल.एन. बैरवा, हरीश वर्मा, ओम प्रकाश, आर.सी. आसीवाल **और** अरविन्द नागर

जानकारी 55
बागों में सितंबर-अक्टूबर के कार्यकलाप
हरे कृष्ण

सामयिक
भारत में दुनिया के सबसे महंगे आमों की बागवानी आवरण II

सार-समाचार
- **बिहार के वैज्ञानिकों ने ईजाद की आम की नई किस्म** आवरण III
- **जीआई प्रमाणित 'जलगांव केला' की पहली खेप दुबई निर्यात**

वैज्ञानिक कृषि ज्ञान तथा प्रशिक्षण की उपयोगिता

वैज्ञानिक तौर-तरीकों से बागवानी, सब्जी उत्पादन तथा अन्य कृषि कार्यकलापों से होने वाले विविध प्रकार के फायदों का महत्व प्रगतिशील एवं जागरूक कृषक भलीभांति समझते हैं। यही कारण है कि ये प्रायः अपने क्षेत्रों में ऐसी नई पहल करने में संकोच नहीं करते और कम से कम लागत में भरपूर उत्पादन लेकर अन्य कृषकों के लिए मिसाल और प्रेरणास्रोत बन जाते हैं। हमारे देश में आज भी यह चिन्ता का विषय है कि काफी बड़ी संख्या में ऐसे कृषक एवं बागवान हैं, जिनका परंपरागत कृषि की ओर झुकाव निरंतर बना हुआ है। इस स्थिति के पीछे कई प्रकार के कारण गिनवाए जा सकते हैं, जिनमें निर्धनता, छोटी जोत, वैज्ञानिक कृषि के उन्नत तरीकों के प्रति जानकारियों का अभाव आदि का विशेष तौर पर उल्लेख किया जा सकता है। जागरूकता की कमी का ही नतीजा है कि अधिकांश कृषि उत्पादों के मामले में वैश्विक औसत उत्पादकता की तुलना में न सिर्फ देश में उत्पादकता का स्तर काफी निचले स्तर पर है, बल्कि लागत भी अपेक्षाकृत तौर पर कहीं अधिक है।

कृषकों एवं बागवानों को अपनी इस मानसिकता को छोड़ना होगा, तभी वे उत्पादन स्तर और आमदनी बढ़ाने में सफल हो सकते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों, कृषि विज्ञान केंद्रों तथा कृषि विश्वविद्यालयों के अलावा राज्यों के कृषि विभागों द्वारा भी कृषकों को आधुनिक कृषि तकनीकों के प्रति जागरूक करने तथा उपयुक्त प्रशिक्षण देने के लिए देशव्यापी स्तर पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इन अभियानों में तकनीकी जानकारियों के अलावा व्यावहारिक पहलुओं पर भी आवश्यक ट्रेनिंग की व्यवस्था की जाती है। 'ऑन हैण्ड ट्रेनिंग' अथवा कृषकों के खेतों में फील्ड प्रदर्शन भी इसी क्रम में लगाए जाते हैं। बताने की आवश्यकता नहीं कि इन कार्यक्रमों से प्रति वर्ष लाखों की संख्या में कृषक लाभान्वित होते हैं और बाद में अपने खेतों/बागों में भी इन तकनीकों का प्रयोग करते हैं।

अद्यतन कृषि तकनीकों की जानकारी हासिल करने का एक अन्य माध्यम है कृषि साहित्य। देश में तमाम सरकारी एवं निजी क्षेत्र के संस्थानों की ओर से ऐसी कृषि पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों आदि का प्रकाशन किया जाता है, जिनमें उन्नत कृषि तकनीकों पर महत्वपूर्ण जानकारियां दी जाती हैं। परिषद के कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा गत 42 वर्षों से निरंतर प्रकाशित की जा रही आपकी अपनी लोकप्रिय पत्रिका ***'फल फूल'*** भी इस क्रम में किसानों एवं बागवानों के लिए अत्यंत उपयोगी साहित्य की श्रेणी में आती है। इस पत्रिका की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि विभिन्न कृषि अनुसंधान संस्थानों में कार्यरत वैज्ञानिकों के शोध अनुभवों पर आधारित लेखों का इसमें प्रकाशन किया जाता है। प्रयास किया जाता है कि लेख अधिक तकनीकी न हों तथा किसान भाइयों के अनुरूप अत्यंत सरल भाषा में हों।

'फल फूल' के प्रस्तुत अंक को ऐसी जानकारियों से समृद्ध बनाने के लिए बागवानी के विविध पहलुओं से जुड़े अत्यंत प्रासंगिक विषयों पर आधारित लेखों का चयन किया गया है। इनमें वैज्ञानिक तरीके से सब्जी पौध उत्पादन, विदेशी शाक-सब्जी उत्पादन तकनीक, अल्प प्रचलित फलों की खेती, आलू में रोग प्रबंधन, गेंदा की खेती, मेंहदी का व्यावसायिक महत्व, तनाव निवारक चाय कैमोमाइल, ईसबगोल की जैविक खेती, टमाटर के म्लानि रोग का प्रबंधन, मिर्च की उन्नत खेती, पान के रोग एवं निवारण, प्राकृतिक सब्जी ककोड़ा, पपीते से मोटी कमाई आदि का खासतौर पर नाम लिया जा सकता है।

उम्मीद करते हैं कि इस अंक के लेखों की जानकारियां किसान एवं बागवान भाइयों के लिए उत्पादन एवं आय बढ़ाने में मददगार सिद्ध होंगी।

(अशोक सिंह)

फलदार फसलों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

सतीश भागवतराव आहेर*, बृज लाल लकारिया** और **नारायण लाल*****

ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन आज मानव जाति के लिए प्रमुख समस्या का रूप ले चुके हैं। मौसम की घटनाओं में आने वाले अत्यधिक तेज बदलावों के फलस्वरूप इस बाबत अनेक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव महसूस किए जा रहे हैं जैसे-वैश्विक तापमान में वृद्धि, ध्रुवीय बर्फ का पिघलना, समुद्र जलस्तर में वृद्धि, सूखा और बाढ़ की बारंबारता, ओलावृष्टि, फसलों और मानव को गंभीर नुकसान आदि। जलवायु परिवर्तन का असर फलदार फसलों पर काफी तीव्र होता है। इससे इन फसलों के व्यावसायिक उत्पादन पर भी बहुत प्रभाव पड़ता है। सामान्य से कम या अधिक तापमान फलों की फसल को बुरी तरह से प्रभावित करता है। इसी प्रकार जलवायु परिवर्तन से सिंचाई जल की उपलब्धता पर भी प्रभाव पड़ता है। यह फलों की उत्पादकता पर असर डालती है। जलवायु परिवर्तन से पादप रोग उत्पन्न करने वाले विभिन्न सूक्ष्मजीवों की संख्या सामान्य से कई गुना ज्यादा बढ़ने से फलों का उत्पादन बड़े पैमाने पर बाधित होता है। इसलिए जलवायु परिवर्तन परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए फलदार फसलों के उत्पादन की स्थिरता के लिए इन्हें ग्लोबल वार्मिंग के कुप्रभाव से बचाने की आवश्यकता है।

भारत में 6.4 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल में फल उगाए जाते हैं। इससे लगभग 92.9 मिलियन टन फल उत्पादन होता है। यह वैश्विक उत्पादन का लगभग 10 प्रतिशत है। फलों में आम, केला, संतरा, अमरूद, अंगूर, अनन्नास, सेब, पपीता और अनार प्रमुख हैं। देश में आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, बिहार, गुजरात तथा तमिलनाडु प्रमुख फल उत्पादक राज्य हैं। सेब का उत्पादन जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में होता है। पश्चिम बंगाल और असोम अनन्नास उत्पादन के लिए अच्छे राज्य हैं। भारत में सबसे ज्यादा क्षेत्रफल आम (2258 हजार हैक्टर) व संतरावर्गीय (1003 हजार हैक्टर) और केला (884 हजार हैक्टर) के अंतर्गत है (सारणी-1)।

जलवायु परिवर्तन से फल उपज में कमी

*वैज्ञानिक 'बी', पर्यावरणीय निगरानी एवं उद्भासन मूल्यांकन (वायु) विभाग, भाकृअनुप-राष्ट्रीय पर्यावरणीय स्वास्थ्य अनुसंधान संस्थान, भौरी, भोपाल-462030 (मध्य प्रदेश); **प्रधान वैज्ञानिक, मृदा रसायन एवं उर्वरता विभाग, ***वैज्ञानिक, भाकृअनुप-भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, नबीबाग, भोपाल-462038 (मध्य प्रदेश)

सेब फसल की जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से सुरक्षा है आवश्यक

फलदार फसलों के लिए नुकसादायक है जलवायु परिवर्तन

- तापमान में वृद्धि के कारण, फल समय से पहले परिपक्व हो जाते हैं व इनका भण्डारण समय घट जाता है।
- वायुमंडलीय तापमान और वर्षा की अधिकता व तीव्रता से फलों की फसल को नुकसान होता है।
- वायुमंडलीय कार्बनडाइऑक्साइड में वृद्धि होने से फसल गुणवत्ता प्रभावित होती है। फलों में कैरोटीन, स्टार्च और ग्लूकोज आदि की मात्रा में वृद्धि होती है। फसलों की जल-उपयोग क्षमता में वृद्धि, लेकिन पानी की उपलब्धता में कमी से फसल पर प्रतिकूल प्रभाव भी पड़ता है।
- फलदार पौधों का उत्पादन व गुणवत्ता फूल, परागण तथा फलों का विकास मौसम पर निर्भर करता है। अधिक ठण्ड और शुष्क जलवायु से फूल लगना प्रभावित होता है। कम तापमान और उच्च आर्द्रता में फूलों का विकास कम होता है व फलदायी फूलों की संख्या कम हो जाती है। अधिक तापमान तथा जल की कमी से फूल अधिक मात्रा में गिरते हैं और फल कम लगते हैं।
- लंबी अवधि तक छाये बादलों की वजह से फलों में एस्कॉर्बिक अम्ल तथा मिठास कम हो जाती है।
- बदलती जलवायु परिस्थितियों में रोगजनक सूक्ष्मजीवों की संख्या में वृद्धि होने से फलों की फसल को अधिक नुकसान पहुंचता है।

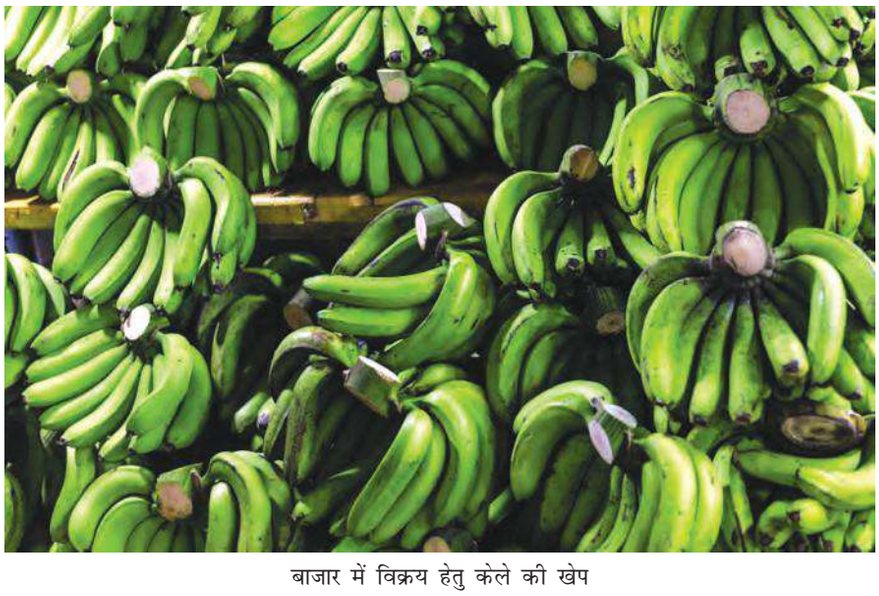

बाजार में विक्रय हेतु केले की खेप

फलदार पौधों को जलवायु परिवर्तन से बचाने के उपाय

जलवायु परिवर्तन से फलदार फसलों पर पड़ने वाले प्रभावों को कम करने के लिए फल उत्पादक निम्नलिखित उपायों के माध्यम से पौधों की सुरक्षा कर सकते हैं:

- हवा को रोकने के लिए बगीचे के चारों ओर मोटे और लंबे उगने वाले वृक्ष उगाएं।
- गर्मी के मौसम में पेड़ों की छंटाई न करें। पेड़ का मुख्य तना और छोटी शाखाओं की सफेद पुताई करने से गर्मी का प्रकोप कम होता है।
- पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए बागों में नियमित तथा उचित सिंचाई करें।
- नये और पुराने पेड़ों के थालों में पलवार फैलाने से तापमान नियंत्रित होता है।
- संवेदनशील नए फलों के पौधों को बाग के अंदरूनी हिस्से में ही लगायें। नए बाग में रोपण के लिए ठंड सहिष्णु किस्मों के पौधों को वरीयता दी जानी चाहिए।
- पौधों को मजबूत और अधिक सहिष्णु बनाने के लिए पर्याप्त खाद और उर्वरक का उपयोग करें।
- ठंड के समय में नियमित रूप से बागों की सिंचाई करें।
- अधिक ठण्ड के समय तापमान नियंत्रित करने के लिए सूखे पत्तों और टहनियों को बागों में जलाएं।
- पूर्व और दक्षिण दिशा में लगाए गए पौधे अन्य दिशाओं की तुलना में अधिक प्रभावित होते हैं। ये अधिक समय तक सूर्य के प्रकाश के संपर्क में रहते हैं इसलिए फलों के पौधों को पश्चिम और उत्तर दिशा में लगाएं।

जलवायु परिवर्तन

किसी भी क्षेत्र में प्रचलित दीर्घकालीन औसत मौसम उस क्षेत्र की जलवायु कहलाता है। जलवायु में सतत् बदलाव की प्रक्रिया जारी रहती है, परंतु इसे आसानी

से अनुभव नहीं किया जा सकता। यह बदलाव बहुत ही धीमा होता है। धीरे-धीरे सभी जीवित प्राणी इस बदलाव के साथ सामंजस्य बैठा लेते हैं। पिछले 150-200 वर्षों में यह जलवायु परिवर्तन इतनी तेजी से हुआ है कि प्राणी व वनस्पति जगत के लिए इस बदलाव के साथ सामंजस्य बैठा पाना मुश्किल हो रहा है।

जलवायु परिवर्तन के सामान्य प्रभाव

जलवायु परिवर्तन के प्रमुख प्रभावों में तापमान एवं कार्बनडाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि, सूखा, बाढ़, ओलावृष्टि, शीतलहर, ठंडे प्रदेशों में न्यूनतम तापमान में गिरावट तथा बढ़ोतरी, गर्म हवाएं, तूफान आदि शामिल हैं। फसलों की तुलना में फलदार पेड़ इन सभी बदलाओं के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। जलवायु परिवर्तन का सीधा प्रभाव खेती पर पड़ता

पोषण एवं आय के स्रोत हैं फल

सारणी 1-भारत में फलदार पौधों के अंतर्गत क्षेत्रफल व अनुकूल तापमान तथा किस्में

फल	आवश्यक तापमान (डिग्री सेल्सियस)	क्षेत्रफल (हजार हैक्टर)	उत्पादन (हजार टन)	प्रमुख उत्पादक राज्य	महत्वपूर्ण किस्में
आम	24-30	2258	21822	उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, बिहार	अल्फान्सो, बादाम, चौसा, लंगड़ा, नीलम, आम्रपाली, मालदा, बैगना पल्ली, दशहरी
केला	15-35	884	30808	आंध्र प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र	रोबुस्टा, मोंथन, पूवन, ड्वार्फ केवेंडिश, नेंद्रण, रेड बनाना, बसराई, अर्द्धपुरी, न्याली, सफेद वेलची रस्थली, कर्पुरवल्ली
संतरा	10-35	1003	12546	आंध्र प्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र	नागपुर संतरा, कुर्ग संतरा, खासी संतरा, मुदखेद, श्रीनगर, बतवाल, डेंसी, करा, दार्जिलिंग मंदारिन, सीडलेस-182, किन्नोव मंदारिन
अमरूद	23-28	265	4054	उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार	सरदार, इलाहबाद सफेदा, ललित, पन्त प्रभात, धारीदार, अर्का मृदुला, खाजा (बंगाल सफेदा), चिट्टीदार, हरिजा
अंगूर	25-32	139	2920	महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु	परलेट, पूसा सीडलेस, थॉमसन सीडलेस, तास-ए-गणेश, सोनाका, मानिक चमन, बंगलौर ब्लू, गुलाबी, अनाब-ए-साथी
अनन्नास	22-32	103	1706	पश्चिम बंगाल, असोम, कर्नाटक	जायंट क्यू, क्वीन, क्यू, मॉरिशस, चारलोट, रोथचाइल्ड, जलधूप, देसी, लखट
सेब	21-24	301	2327	जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड	लाल अम्बरी, सुनहरी, चौबटिया प्रिसेंस, चौबटिया अनुपम, अम्ब्रेड, अम्ब्रिच, अम्ब्रोयल,
पपीता	25-35	138	5989	आंध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक	हनीड्यू, कुर्ग हनीड्यू, वाशिंगटन, सोलो, को-1, को-2, को-3, सनराइज सोलो, ताइवान, रांची सलेक्शन, पूसा डिलीशियस, पूसा नन्हा
अनार	35-38	234	2845	महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक	गणेश, मृदुला, आरक्त, रूबी, फुले भगवा, फुले भगवा सुपर

फल बगीचा

है। तापमान, वर्षा आदि में बदलाव आने से मृदा की जैविक क्रियाशीलता, कीट तथा उनसे फैलने वाले रोग अपने सामान्य तरीके से भिन्न हो जाते हैं। जलवायु परिवर्तन के दौरान कृषि क्षेत्र में फसल उत्पादन की मात्रा व गुणवत्ता में कमी, भूमि एवं मृदाक्षरण, मृदा स्वास्थ्य में गिरावट, मृदा जैव विविधता में कमी, मृदा पारिस्थितिक तंत्रों में असंतुलन आदि शामिल हैं।

पपीते की खेती है लाभकारी

सुरेंदर कुमार*, कर्म वीर*, अंजीत कुमार*, प्रदीप कुमार*, नबीन कुमार दास* और एम. मधु*

पपीते की खेती भारत के किसानों में बहुत लोकप्रिय हो रही है। सटीक ज्ञान व मार्गदर्शन से किसान एक एकड़ क्षेत्रफल में पपीता उगाकर लाखों रुपये तक की आय प्राप्त कर सकते हैं। पपीता, भारत की भौगोलिक स्थितियों के आधार पर ज्यादातर राज्यों में उगाया जा सकता है। प्रस्तुत लेख में पपीते की खेती से संबंधित गतिविधियों बिंदुवार वर्णन किया गया है।

पपीता का वानस्पतिक नाम *केरिका पपाया* है। यह कैरिकेसी परिवार का एक महत्वपूर्ण सदस्य है। पपीता बहुत ही पौष्टिक एवं गुणकारी फल है। यह बहुत ही जल्दी बढ़ने वाला पेड़ है। पपीता एक वर्ष में ही फल देने लगता है और शीघ्र पकने वाले फलों में अत्यंत उत्तम है। यह विटामिन 'ए' व विटामिन 'सी' का अच्छा स्रोत है। इसका मुख्य तौर पर दो अवस्था में उपयोग किया जाता है। कच्ची अवस्था में यह हरे रंग का होता है और पकने पर पीले रंग का हो जाता है। कच्चे फलों से दूध भी निकाला जाता है, जिससे पपेन तैयार किया जाता है। सौन्दर्य तथा उद्योग जगत में इसका व्यापक इस्तेमाल किया जाता है। भारत में इसकी सफलतापूर्वक बागवानी उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, असोम, बिहार, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, ओडिशा इत्यादि प्रदेशों में की जाती है।

*भाकृअनुप-भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, अनुसंधान केंद्र, सुनबेड़ा, कोरापुट (ओडिशा)

खाद व उर्वरक का प्रयोग

पपीते की खेती में पोषक तत्वों की कमी को पूरा करने के लिए 250 ग्राम नाइट्रोजन, 150 ग्राम फॉस्फोरस और 250 ग्राम पोटाश प्रति पौधा प्रति वर्ष देना चाहिए। फॉस्फोरस व पोटाश की आधी-आधी मात्रा 2 बार में देनी चाहिए। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए प्रतिवर्ष प्रति पौधा 20-25 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, एक कि.ग्रा. बोनमील और एक कि.ग्रा. नीम की खली की जरूरत पड़ती है। खाद की इस मात्रा को समान अनुपात में एक वर्ष में तीन बार मार्च-अप्रैल, जुलाई-अगस्त और अक्टूबर में देना चाहिए।

मृदा एवं जलवायु

पपीते की खेती के लिए न्यूनतम तापमान 5 डिग्री और अधिकतम 38 से 44 डिग्री सेल्सियस तक होना अनिवार्य है। इसकी खेती के लिए हल्की दोमट या दोमट मृदा, उपजाऊ, कार्बनिक पदार्थों से भरपूर और अच्छे जल निकास वाली मृदा 6.5 से 7.5 तक पी-एच मान वाली मृदा सबसे अच्छी मानी जाती है।

किस्में और उत्पादन

पपीते की कई देसी और विदेशी संकर किस्मों का चयन करके पपीते की खेती से अच्छी पैदावार ली जा सकती है। इसकी मुख्य किस्मों का विवरण सारणी में दिया गया है।

बुआई

पपीते का बीज बोने का समय जुलाई से सितम्बर और फरवरी-मार्च होता है। बीज अच्छी किस्म के व स्वस्थ फलों से लेने चाहिए। नई किस्म संकर प्रजाति की होने पर हर बार इसका नया बीज ही बोना चाहिए। बीजों को क्यारियों, लकड़ी के बक्सों, मिट्टी के गमलों

पपीते की खेती में टपक सिंचाई प्रणाली

तना तथा जड़गलन रोग

इस रोग से प्रभावित पौधों की जड़ें गलने लगती हैं, पत्तियां सूख जाती हैं, तने का ऊपरी छिलका पीला होकर गलने लगता है और पौधा मर जाता है। इस रोग का प्रमुख कारण जल का अधिक समय तक ठहराव होना है। इसकी रोकथाम के लिए पौधों पर एक प्रतिशत बोरडॉक्स मिश्रण या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

व पॉलीथीन की थैलियों में बोया जा सकता है। पौधे को पद विगलन रोग से बचाने के लिए क्यारियों को फार्मलीन के 1:40 के घोल से उपचारित कर लेना चाहिए। बीजों को भी 0.1 फीसदी कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल से उपचारित करके बोना चाहिए।

रोपण दूरी

यदि हम पपीते की पौधे से पौधे और पंक्ति से पंक्ति की दूरी 2 × 2 मीटर रखते हैं, तो एक हैक्टर में 2500 पौधे लगेंगे।

रोग प्रबंधन

पपीते में मुख्य तौर पर कीटों से रोग फैलते है। इसमें लगने वाले रोग निम्न हैं:

डेम्पिंग ऑफ

नर्सरी में ही पपीते के छोटे पौधे नीचे से गलकर मर जाते हैं। इससे बचने के लिए बीज बोने से पहले सेरेसान एग्रोसन जी.एन. से तथा सीडबेड को 2.5 प्रतिशत फार्मेल्डिहाइड घोल से उपचारित करना चाहिए।

मोजेक

इस रोग में पत्तियों का रंग पीला हो जाता है व डंठल छोटा और आकार में सिकुड़ जाता है। इसके लिए 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. 250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना काफी फायदेमंद होता है।

सिंचाई व खरपतवार नियंत्रण

पानी की कमी होने से पपीते के उत्पादन पर बहुत बुरा असर पड़ता है। पपीते में गर्मियों में 6-7 दिनों के अंतराल पर और सर्दियों में 10-12 दिनों के अंदर सिंचाई करनी चाहिए। पपीते के बगीचे में तमाम खरपतवार उग जाते हैं। इससे पौधे की बढ़वार व उत्पादन पर उलटा असर पड़ता है। खरपतवारों से बचाव के लिए जरूरत के मुताबिक निराई-गुड़ाई करनी चाहिए।

पपीते की खेती से कमाई

कमाई करने के मामले में पिछले कुछ वर्षों में पपीते की खेती की तरफ

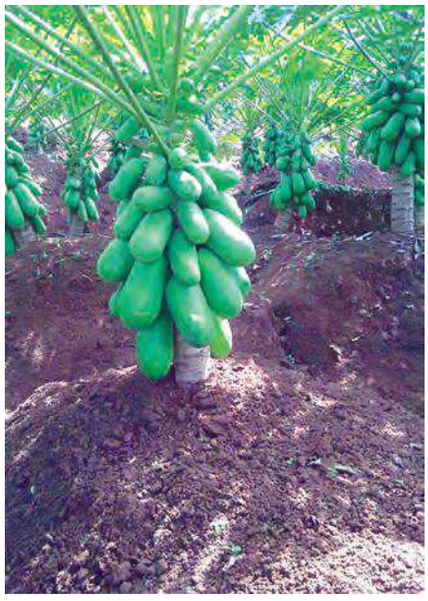

पपीते की बम्पर फसल

किसानों का रुझान बढ़ रहा है। हाल के दौर में बाजार में आई संकर किस्मों के कारण पपीते से कमाई करना पहले से ज्यादा आसान हुआ है।

उपज

पपीते की खेती अच्छी तरह वैज्ञानिक तरीके से करने पर और उन्नत किस्मों के प्रयोग से प्रति पौधा 40-50 कि.ग्रा. उपज प्राप्त हो जाती है।

2500 × 50 = 125,000 कि.ग्रा./हैक्टर।

यदि सामान्य थोक दर 10 रुपये कि.ग्रा. रहे तो

एक हैक्टर में 1,25,000 × 10 = रु. 12,50,000

इसमें कुल खर्च एक हैक्टर में औसतन 1.5-2.0 लाख रुपये अधिकतम होता है।

2 × 2 मीटर की दूरी पर पौधे लगाने पर

शुद्ध आय 12,50,000-2,00,000 = रु. 10,50,000

यदि और भी कोई समस्या आ जाये या दाम कम मिले तब भी हमें

10,50,000 रुपये का लाभ मिल जाता है, जो कोई भी परंपरागत फसल नहीं दे सकती है।

अतिरिक्त लाभ

पपीते की खेती के साथ-साथ हम इसके नीचे खाली जगह में कुछ छोटे आकार के पौधे वाली सब्जियों का उत्पादन भी कर सकते हैं। जैसे-प्याज, मेथी, पालक, धनिया इत्यादि। ये किसान के लिए बोनस के तौर पर उनकी आय बढ़ने में कारगर सिद्ध होंगी। ■

सारणी: पपीते की मुख्य किस्में

किस्म	विमोचन वर्ष एवं संस्थान	अनुमोदित क्षेत्र	उपज (कि.ग्रा./पौधा)	विशेषताएं
पूसा डेलिसियस	1986, भाकृअनुप-पूसा (बिहार)	संपूर्ण भारत	40-45	पपीते की गाइनोडाइसियसे प्रजाति है। मादा और नर दो फूल एक ही पौधे पर आते हैं। फल का वजन 1-2 कि.ग्रा.।
पूसा मैजेस्टी	1986, भाकृअनुप-पूसा (बिहार)	संपूर्ण भारत	35-40	पपीते की गाइनोडाइसियसे प्रजाति है। पपेन के लिए उपयुक्त और भंडारण क्षमता भी अधिक होती है। फल का वजन 1.0-1.5 कि.ग्रा.।
पूसा जायंट	1981, भाकृअनुप-पूसा (बिहार)	संपूर्ण भारत	30-35	नर तथा मादा फूल अलग-अलग पौधे पर पाये जाते हैं। तेज हवाओं के प्रति सहनशीलता वाले क्षेत्रों में अधिक उपयोगी। फल का वजन 1.5-3.0 कि.ग्रा.।
पूसा ड्वार्फ	1986, भाकृअनुप-पूसा (बिहार)	संपूर्ण भारत	40-45	यह छोटी बढ़वार वाली किस्म है। नर तथा मादा फूल अलग अलग पौधे पर आते हैं। फल का वजन 1.0-1.5 कि.ग्रा.।
रेड लेडी 786	2013, पंजाब कृषि विश्वविद्यालय लुधियाना	पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दिल्ली झारखंड और राजस्थान	80-100	नर व मादा फूल एक ही पौधे पर होते हैं। भंडारण क्षमता अधिक होती है। अन्य किस्मों से जल्दी तैयार हो जाती है।

पान के प्रमुख रोग एवं निवारण

सिद्धार्थ सिंह*, सौमिक मुखर्जी*, बन्दना मयंगलम्बम्* और **गौतम मंडल***

नगदी फसल के रूप में पान की खेती भारत में व्यावसायिक रूप से अधिक महत्वपूर्ण है। पान एक बहुवर्षीय बेल है। इसका उपयोग हमारे देश में पूजा-पाठ के साथ-साथ खाने में भी होता है। भारत में पान की खेती लगभग 50,000 हैक्टर क्षेत्रफल में की जाती है। इसके अतिरिक्त इसकी खेती बांग्लादेश, श्रीलंका, मलेशिया, सिंगापुर, थाईलैण्ड, फिलीपींस आदि देशों में भी सफलतापूर्वक की जाती है।

पान में लगने वाले रोग फसल को अत्यधिक हानि पहुंचाते हैं। इसके प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन निम्नलिखित है:

पत्ती सड़न रोग

लक्षण: वर्षा के दिनों में पान की निचली पत्तियों पर भूरे रंग के गोल, नम धब्बे दिखाई देते हैं। ये बड़े आकार के काले रंग के एवं घेरेदार हो जाते हैं। पत्तियां सड़ जाती हैं। डंठल भी सड़कर तनों पर रोग फैलाते हैं एवं बेल नष्ट हो जाती हैं।

जड़ सड़न रोग

लक्षण: फफूंद बेलों के तनों पर

*बिधान चन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, मोहनपुर, नादिया (पश्चिम बंगाल)

संक्रमित पान के पत्ते

पदगलन रोग

इस रोग से प्रभावित बेल का जमीन के पास का भाग सड़ जाता है और बेल के चारों तरफ जमीन में सफेद धागों की तरह फफूंद का जाल दिखाई देता है। इस पर बाद में छोटी-छोटी गांठें हो जाती हैं। पौधे की वृद्धि की सभी अवस्थाएं रोगग्राही होती हैं।

प्रबंधन: प्रभावित बेल या उसके चारों तरफ की मृदा को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। सौर ऊर्जा से उपचारित मृदा का प्रयोग करने से रोग बिलकुल नहीं लगता।

जड़ सड़न रोग से प्रभावित पत्तियां

आक्रमण करती हैं एवं शीघ्र सड़न होने से बेल मर जाती हैं। पत्तियां हल्की पीली होकर गिरने लगती हैं। मुख्य तना एवं जड़ सड़ने के कारण बेल भी सूख जाती है।

नियंत्रण: उपरोक्त दोनों रोगों के प्रबंधन के लिए बीज के तौर पर स्वस्थ बेलों का प्रयोग

तैयार होती पान की फसल

झुलसा रोग से प्रभावित पान का पत्ता

करना चाहिए। रोपण करने से पहले बेल व पत्तियों को अलग कर देना चाहिए। बीज वाली बेलों को बोर्डो मिश्रण (1 प्रतिशत) से 15 मिनट तक उपचार कर रोपण के लिए उपयोग करें। बरसात में यदि पत्तियों पर धब्बे दिखाई दें, तो ब्लाइटॉक्स या अन्य ताम्रयुक्त फफूंदनाशक 0.3 प्रतिशत और स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 3 ग्राम प्रति 10 लीटर ब्लाइटॉक्स के घोल में मिलाकर 2-3 बार 10-12 दिनों के अंतर पर छिड़काव करें।

जीवाणु पत्ती धब्बा

लक्षण: जीवाणु रोग के लक्षण पान की पत्तियों व बेलों पर दिखाई देते हैं। रोग की शुरुआत में पत्तियों पर छोटे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जिनके चारों ओर पीला क्षेत्र पाया जाता है। धब्बे के चारों तरफ जल रिक्त क्षेत्र बन जाता है। कभी-कभी पत्ती अंगमारी लक्षण पत्ती के किनारों पर V आकार के रंगहीन क्षेत्र के रूप में दिखाई देते हैं।

प्रबंधन: पान की बेलों को बोने से पहले स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 500 पीपीएम और बोर्डो मिश्रण (0.5 प्रतिशत) के घोल में आधा घंटा डुबोकर रोपण करें। स्ट्रेप्टोमेसिन 500 पीपीएम का छिड़काव रोग के लक्षण दिखते ही आरंभ कर देना चाहिए।

पदगलन रोग से प्रभावित पान की बेल

जीवाणु पत्ती धब्बा रोग से ग्रसित पत्ती

बीघा

रोगग्रस्त भाग पर सर्वप्रथम छोटे, काले गोल क्षतिग्रस्त धब्बे बनते हैं, जो आर्द्र मौसम में बहुत तेजी से बढ़ते हैं। कभी-कभी यह तने को पूरी तरह से घेर लेता है, जिसके कारण प्रभावित बेल गांठों से टूट जाती हैं या मुरझा जाती है। बेल की गांठ काली पड़ जाती है और पत्तियों पर अनियमित आकृति के भूरे रंग के धंसे हुए क्षतिग्रस्त क्षेत्र बनते हैं।

प्रबंधन: रोग के लक्षण दिखते ही डायथेनियम-45 (0.3 प्रतिशत) या बाविस्टीन (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव उपयोगी पाया गया है। दो से तीन छिड़काव करने पर रोग की रोकथाम की जा सकती है।

बुकनी रोग

यह रोग जनवरी-फरवरी में तेजी से फैलता है। शुरुआत में पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद-भूरे चकत्ते दिखाई पड़ते हैं। धीरे-धीरे ये आपस में मिलकर पूरी पत्ती को ढक लेते हैं। चकत्तों का ऊपरी भाग पीला पड़ जाता है। प्रभावित पत्तियां लाल रंग की होकर शीघ्र गिर जाती हैं।

रोकथाम: रोग के लक्षण दिखाई देने पर कैराथियॉन एल.सी. अथवा कैलैक्सिन 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

झुलसा रोग

रोग के प्रकोप से पत्तियों पर गहरे, काले धब्बे पड़ जाते हैं या पत्तियां पूर्ण रूप से सूख जाती हैं।

रोकथाम: डायथेन एम-45 2 ग्राम/लीटर की दर से छिड़काव करना चाहिए। ■

वैज्ञानिक तकनीक से सब्जी पौध उत्पादन

अभिषेक प्रताप सिंह* और **मनोज कुमार रॉय****

विभिन्न प्रकार के कवक, विषाणु एवं सूत्रकृमिजनित व्याधियों का फैलाव सब्जी पौधशाला से मुख्य खेत में होता है। इसमें सफेद मक्खी, एफिड एवं थ्रिप्स इन विषाणुजनित रोगों को एक पौधे से अन्य पौधों में फैलाने का कार्य करते हैं। मुख्य रूप से खुले में पौधशाला तैयार करने पर इन कीटों का प्रकोप बहुत ही अधिक होता है। पॉलीटनल में सब्जी की नर्सरी तैयार करने से इन रोगों के कारक मुख्य खेत तक नहीं पहुंच पाते हैं।

लो-टनल पॉलीहाउस में नर्सरी तैयार करने के लाभ

- बेमौसमी पौध तैयार करके 30-35 दिनों पूर्व अगेती फसल ली जा सकती है
- पौधशाला में पौध तैयार करने के सभी काम आसानी से कम समय व लागत में हो जाते हैं। कीमती बीजों का समुचित अंकुरण हो जाता है
- कद्दूवर्गीय एवं अन्य सब्जियों की पौध तैयार करके बाजार में बेचकर अधिक लाभ कमाया जा सकता है। इस प्रकार इसे एक व्यवसाय के रूप में भी ग्रामीण युवकों द्वारा अपनाया जा सकता है।

पॉलीटनल निर्माण के लिए पौधों की सुरक्षा के लिए क्यारियों के ऊपर 75 सें.मी. की ऊंचाई पर अर्द्ध वृत्ताकार सुरंगनुमा ढांचा बनाया जाता है। इन ढांचों के ऊपर मध्य में नायलॉन/जूट की रस्सी बांधकर क्यारी के एक सिरे से दूसरे सिरे पर गड़े बांस के छोटे खम्भे से बांध दिया जाता है। इस बने ढांचे पर एक सिरे की जमीन से दूसरे सिरे की जमीन 24 मेश नायलॉन जाल से ढक दी जाती है। इसके किनारे गीली मिट्टी से दबा देते हैं, जिससे कि तेज हवा के झोंके चलने पर जाल हटने न पाए। अगर जाल हट जाएगा तो रोग को फैलाने वाले कीट अंदर प्रवेश करके सभी सब्जी पौधों में रोग को फैला देते हैं। वर्षा के समय एवं उत्तर भारत में दिसम्बर-जनवरी में कम तापमान होने पर इस नायलॉन के जाल के ऊपर 200-250 गेज मोटी पारदर्शी पॉलीथीन की चादर डालना आवश्यक हो जाता है। इस प्लास्टिक को आड़े-तिरछे तरीके से बांध दिया जाता है।

लो टनल पॉलीहाउस के लिए आवश्यक सामग्री (क्यारी का आकार: 7.0 × 0.75 × 0.15 मीटर):

- 12 टनल (6 गेज जस्ताकृत तार)
- 10 मीटर नायलॉन जाल
- 10 मीटर 200-250 गेज
- 30 कि.ग्रा. अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद
- 30 कि.ग्रा. मोरंग/बालू

उन्नत तकनीक द्वारा सब्जी पौध उत्पादन

*कृषि विज्ञान केंद्र, पूर्णिया; **कृषि विज्ञान केंद्र, किशनगंज, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर (बिहार)

पॉलीटनल निर्माण के लिए स्थान का चयन

- भूमि का चयन अपेक्षाकृत ऊंचे स्थान पर करना चाहिए, जिससे पानी आसानी से निकल जाए
- पौधशाला के लिए बलुई मृदा दोमट तथा पी-एच मान 6.0-7.0 होना चाहिए
- पौधशाला के लिए सिंचाई का साधन नजदीक होना चाहिए
- पौधशाला के पास छायादार वृक्ष नहीं होने चाहिए। इससे पौधों की वृद्धि एवं विकास ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है। पौधशाला घर के पास ही होनी चाहिए, ताकि देखरेख ठीक से हो सके

- 20 ग्राम कार्बेन्डाजिम (बाविस्टीन)
- 100 मीटर नायलॉन की रस्सी

नोट: स्थानीय स्तर पर उपलब्ध बांस का प्रयोग जस्ताकृत तार की जगह पर किया जा सकता है। इससे लागत में काफी कमी आ जाती है।

प्रो-ट्रे में बीज बुआई

यह विधि छोटे एवं कीमती बीजों तथा फूलों की पौध तैयार करने के लिए अत्यंत उपयोगी है। इसमें 50 सें.मी. लंबी तथा 30 सें.मी. चौड़ी प्लास्टिक की ट्रे होती है, जिसमें लगभग 104 कप की आकृतियां बनी होती हैं। इसमें अच्छी प्रकार से सड़ी हुई गोबर की खाद एवं मिट्टी को समान अनुपात में मिलाकर भरने के बाद बीज की 0.5 सें.मी. की गहराई में बुआई करते हैं। इस विधि में अंकुरण प्रतिशत अधिक होता है। बुआई के बाद प्रो-ट्रे को पॉलीथीन शीट अथवा पुराने अखबार से ढक देते हैं एवं पानी का छिड़काव धीरे-धीरे करते हैं। बीज के अंकुरित होते ही शाम के समय प्लास्टिक/अखबार को हटा लिया जाता है। आवश्यकतानुसार नमी बनाये रखने के लिए पानी का छिड़काव करते रहते हैं। इस प्रकार बीजों के अंकुरण के लिए विभिन्न सब्जियों के लिए निम्न समायावधि लगती है:

कृषकों को प्रशिक्षण

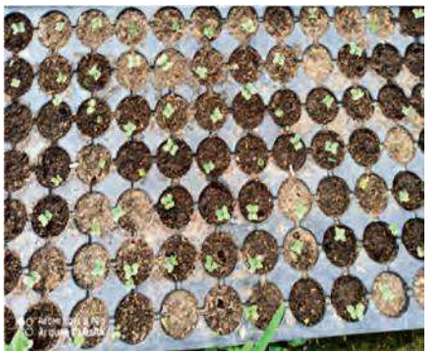

प्रो ट्रे में सब्जी पौध विकास

- शिमला मिर्च एवं मिर्च: 8-10 दिन
- प्याज: 4-6 दिन
- बैंगन: 7-8 दिन
- गोभीवर्गीय सब्जियां: 2-3 दिन
- टमाटर: 4-6 दिन

कद्दूवर्गीय सब्जियों की पौध तैयार करना

कद्दूवर्गीय सब्जियों के बीजों की बुआई पॉलीथीन की थैलियों (पॉलीबैग) में करनी चाहिए। दिसम्बर व जनवरी में बीजों के अच्छे जमाव के लिए पॉलीबैग में बुआई करने के उपरांत इसको लो-टनल पॉलीहाउस में रख दिया जाता है।

पॉलीबैग की तैयारी

इसके लिए पॉलीथीन की 10 × 6 या 15 × 10 सें.मी. व 200-300 गेज मोटाई की थैलियों का चयन करते हैं। इन थैलियों के निचले भाग में 2-3 छिद्र बना देते हैं। बाद में 1:1:1 के अनुपात में सड़ी हुई गोबर की खाद, कम्पोस्ट, मिट्टी व बालू को समान रूप से मिलाकर थैलियों में भरकर हल्के हजारे से पानी डालकर उसमें एक-एक बीज की बुआई करते हैं। सामान्य तौर पर चाय पीने वाले प्लास्टिक के ग्लास या मिट्टी के कुल्हड़ का भी प्रयोग पॉलीबैग के स्थान पर किया जाता है।

अंकुरण के बाद पौधों की देखभाल

अंकुरण के बाद पॉलीबैग में आवश्यकतानुसार हजारे से हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए, जिससे पौधों का समुचित विकास हो सके। यदि पौधों में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई दें, तो घुलनशील एन.पी.के. (19: 19: 19) घोल का पर्णीय छिड़काव भी किया जा सकता है। खरपतवार के पौधे दिखाई दें, तो उन्हें हाथों से उखाड़ देना चाहिए।

कीटों एवं रोगों की रोकथाम

पौधगलन रोग पीथियम, राइजोक्टोनिया या फ्यूजेरियम से फैलता है। इनसे बचाव के लिए कैप्टॉन दवा का 2-5 ग्राम प्रति लीटर

पॉलीटनल का दृश्य

सारणी: बीजों को बुआई पूर्व पानी में भिगोने का समय

पानी में भिगाने की अवधि (घंटे में)	सब्जी बीज का नाम
3-4	खीरा, ककड़ी, कुम्हड़ा (कदीमा), तरबूजा
24-36	करेला
6-8	लौकी, जेनुवा, तोरई, पेठा
10-12	खरबूजा, टिंडा, चिंचिड़ा

पानी की दर से छिड़काव करते हैं। नर्सरी में पत्ती खाने वाले कीट लगते हैं। इसके लिए क्लोरोपाइरीफॉस/क्यूनालफॉस 1 मि.ली./लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करते हैं। यदि पत्ती में रस चूसने वाले कीटों का प्रकोप हो, तो मेटासिस्टॉक्स 1 मि.ली./लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

हार्डनिंग/पौधों को सख्त बनाना

पौधों को मुख्य खेत में रोपने के लिए पौधशाला में 4-6 दिन पूर्व सिंचाई करना बंद कर देते हैं। पौध लगाने के दो घंटा पूर्व हल्की सिंचाई कर देते हैं, जिससे कि पौधे आसानी से उखड़ सकें।

पौध रोपण

पौध जब 4-6 सप्ताह पुरानी या 10-15 सें.मी. लंबी तथा इन पर 3-4 पत्तियां हो जाएं, तब रोपाई की जा सकती है। पौध रोपण से पूर्व ट्राइकोडर्मा (10 ग्राम/लीटर पानी) या बाविस्टिन (1 ग्राम/लीटर पानी) के घोल में 30 मिनट तक पौधे की जड़ों को डुबोकर उपचारित करना चाहिए। पौध रोपण हमेशा सायंकाल में करना चाहिए। इससे पौधे रातभर में भलीभांति स्थापित हो जाते हैं। बादल या छाया रहने पर रोपाई किसी भी समय की जा सकती है। रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। रोपाई के 7-10 दिनों के बाद यदि कोई पौधा सूख जाए, तो उस स्थान पर नई पौध रोपित कर दें। ■

कैमोमाइल है एक तनाव निवारक चाय

एम.एल. मेहरिया* और **हितेश बोराणा****

कैमोमाइल (*मेट्रीकेरिया कैमोमिला* एल.) मानव जाति के लिए ज्ञात सबसे प्राचीन जड़ी-बूटियों में से एक है। इस पौधे का उत्पत्ति स्थल दक्षिणी-पूर्वी यूरोप है। यह एस्ट्रेसी कुल का पौधा है। कैमोमाइल जर्मनी, हंगरी, फ्रांस, रूस, यूगोस्लाविया और ब्राजील में भी उगाया जाता है। भारत में इसकी खेती मुख्यत: पंजाब, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र व जम्मू-कश्मीर में की जाती है। राजस्थान में कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर नई फसलों पर अनुसंधान कार्य कर रहा है, जिसमें प्रमुख रूप से किनोवा, चिया, असालिया आदि फसलें शामिल हैं। इसी क्रम में गत रबी वर्ष 2019-20 से नई फसल कैमोमाइल पर भी अनुसंधान कार्य शुरू किया गया है। कैमोमाइल एक वर्षीय पौधा है, जिसमें पतली स्पिडंल के आकार की जड़ें होती हैं। इसका तना शाखित व सीधा खड़ा रहता है। इसके पौधे 80 सें.मी. की ऊंचाई तक वृद्धि करते हैं। इसकी पत्तियां लंबी और पतली संकरी होती हैं। इसमें पीले रंग के फूल लगते हैं, जिनका व्यास 10 से 30 मि.मी. होता है।

कैमोमाइल के फूलों में नीला आवश्यक तेल (वोलेटाइल ऑयल) 0.2 से 1.9 प्रतिशत पाया जाता है। इसका उपयोग मुख्य रूप से एंटीइंफ्लेमेट्री और एंटीसेप्टिक के रूप में किया जाता है। बाह्य रूप से इसे पाउडर के रूप में घावों पर लगाने के लिए प्रयोग किया जाता है। कैमोमाइल के फूल के तेल में मुख्य रूप से 75-90 प्रतिशत सेस्क्वीटर्पिन डेरिवेटिव होते हैं। तेल में 20 प्रतिशत तक पॉलीनेन्स होते हैं। फूलों से निकाले गए आवश्यक तेल के प्रमुख घटक हैं-बीटा फरनेसेन (4.9-8.1 प्रतिशत), टर्पिन एल्कोहल (फरनेसोल), केमाजुलीन (2.3-10.9 प्रतिशत), एल्फा बिसाबोलोल (4.8-11.3 प्रतिशत), एल्फा बिसाबोलोल ऑक्साइडस-ए (25.5-28.7 प्रतिशत) और एल्फा बिसाबोलोल ऑक्साइडस-बी (12.2-30.9 प्रतिशत)। तेल का रंग इसकी गुणवत्ता निर्धारित करता है। तेल का नीला रंग सेस्क्वी टर्पिन के कारण होता है। केमाजुलीन की मात्रा भण्डारण के दौरान कम हो जाती है। कैमोमाइल से चाय बनाने के लिए पहले सूखे फूलों को गर्म पानी में उपचारित किया जाता है। इसके सेवन से

*सहायक आचार्य; **वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता, कृषि अनुसंधान केन्द्र, मण्डोर, जोधपुर

कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को दूर किया जा सकता है। इसका सुवास हल्का मीठा होता है। कैमोमाइल चाय में एंटीऑक्सीडेंट, एंटीइंफ्लेमेट्री और फ्लेवोनॉइड्स गुण होते हैं, जो शरीर की कई रोगों से रक्षा करते हैं। यह हृदय और शरीर को स्वस्थ रखने में मददगार है। होम्योपैथी और आयुर्वेदिक औषधियां बनाने में वर्षों से कैमोमाइल का उपयोग किया जाता रहा है।

उत्पादन प्रौद्योगिकी

मृदा व जलवायु

जर्मन कैमोमाइल को किसी भी प्रकार की मृदा में उगाया जा सकता है। भारी और नम मृदा इसकी खेती के लिए उपयुक्त नहीं रहती है। इसकी खेती 2 से 20 डिग्री सेल्सियस तापमान में की जा सकती है। तापमान व प्रकाश की अवधि का आवश्यक तेल एवं अजीनल की मात्रा पर सीधा प्रभाव पड़ता है। इसके पौधे क्षारीयता को सहन करने की क्षमता रखते हैं।

कैमोमाइल के सूखे फूल

बीज व बुआई

कैमोमाइल के पौधों का प्रवर्धन बीज द्वारा किया जाता है। इसके बीज बहुत ही महीन (सूक्ष्म) होते हैं। इसके एक हजार बीजों का वजन 0.088 से 0.153 ग्राम होता है। इसकी खेती दो प्रकार से की जाती है-सीधी बुआई, जिसमें बीज की सीधे खेत में बुआई कर दी जाती है और दूसरा इसकी नर्सरी तैयार करके। इसके पौधों को बाद में खेत में रोप दिया जाता हं। इसकी नर्सरी तैयार करने के लिए 200 से 250 वर्ग सें.मी. के क्षेत्रफल में 0.3 से 0.5 कि.ग्रा. बीजों को बो दिया जाता है, जो एक हैक्टर के लिए पर्याप्त रहता है। अच्छे बीज अंकुरण के लिए इष्टतम तापमान 10 से 20 डिग्री सेल्सियस के बीच होना चाहिए। नर्सरी तैयार करने के लिए उत्तर भारत में मानसून समाप्ति के तुरन्त बाद सितम्बर में बीजों की बुआई कर जाती है। इसके बीजों का अंकुरण 4 से 5 दिनों के भीतर हो जाता है और इसके पौधे खेत में रोपाई के लिए 4 से 5 सप्ताह में तैयार हो जाते हैं। फसल से उच्च पैदावार प्राप्त करने के लिए रोपाई का सबसे अच्छा समय 10 से 18 अक्टूबर रहता है।

कैमोमाइल से तैयार स्वास्थ्यवर्द्धक चाय

फसल वृद्धि

जनवरी के मध्य तक फसल की वृद्धि धीमी होती है। इसके बाद फरवरी की शुरुआत तक बढ़ जाती है। जैसे-जैसे मौसम गर्म होता है, फसल में उच्च वृद्धि (ऊंचाई में वृद्धि, शाखा, कली गठन) और फूलों का बनना शुरू हो जाता है। इसके फूलों की समय-समय पर तुड़ाई कर दी जाती है। तापमान में अचानक वृद्धि 33 से 39 डिग्री सेल्सियस होने से फसल में ज्यादा मात्रा में बीज बनते हैं और पौधे में परिपक्वता आ जाती है। इसके बीज नीचे गिर जाते हैं, जो कि अगले वर्ष अपने आप उस जगह पर उग जाते हैं।

सिंचाई

इसके पौधे की जड़ें उथली होने के कारण मृदा के निचले स्तरों से नमी सोखने में असमर्थ होती हैं। इसलिए एक इष्टतम नमी के स्तर को बनाये रखने के लिए लगातार

सिंचाई की आवश्यकता होती है। फूलों के खिलने की अवधि के दौरान सिंचाई फूलों की पैदावार बढ़ाने में सहायक होती है। फूलों की एक अतिरिक्त तुड़ाई प्राप्त होती है और बीज बनने में देरी होती है। फसलचक्र के दौरान लगभग 6 से 8 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

खाद व उर्वरक

नाइट्रोजन का प्रभाव ताजे फूलों और तेल की पैदावार पर पड़ता है, जबकि फॉस्फोरस व पोटेशियम का नगण्य प्रभाव पड़ता है। रोपाई से पहले गोबर की खाद का 15 से 25 टन/हैक्टर का प्रयोग फायदेमंद रहता है।

खरपतवार नियंत्रण

शुरुआत में इसके पौधों की धीमी वृद्धि होने के कारण खरपतवारों को समय पर निकालना फूलों की पैदावार के लिए फायदेमंद रहता है। छोटी अवस्था में खरपतवारों को हाथ से उखाड़ना चाहिए और इसके बाद निराई कर देनी चाहिए। फसल की पूरी अवधि के दौरान 3 से 4 बार खरपतवारों को निकालना चाहिए। रसायनों में 2-4 डी सोडियम साल्ट का 1 से 1.5 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से प्रयोग करने पर रोपाई के चार सप्ताह तक खरपतवार का अच्छा नियंत्रण होता है। खरपतवारों से फूलों की उपज में 34 प्रतिशत तक की कमी हो जाती है। ऑक्सीफ्लोरफेन 0.6 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर का प्रयोग खरपतवारों को नष्ट करने में लाभदायक रहता है।

कटाई/तुड़ाई

कैमोमाइल की खेती में कटाई सबसे श्रम प्रधान कार्य है। इसकी खेती की सफलता इस बात में निहित है कि मार्च-अप्रैल में सही समय पर इसके फूलों को तोड़ना चाहिए। पूर्ण खिलने की निकट अवस्था में फूल सर्वोत्तम गुणवत्ता देते हैं। फूलों को तोड़ते समय यह सावधानी बरतनी चाहिए कि जितना संभव हो उतनी कम कलियों, तनों, पत्तियों और बाहरी सामग्री को गिराया जाए। फूल फ्लश में उत्पन्न होते हैं और पूरी अवधि के दौरान 4 से 5 फ्लश प्राप्त होते हैं। फूल उपज की दृष्टि से 2,3,4 फ्लश प्रमुख योगदान देते हैं। प्लकिंग की चरम अवधि मार्च के दूसरे सप्ताह और उत्तर भारत में अप्रैल के तीसरे सप्ताह के बीच होती है।

बढ़ता औषधीय महत्व कैमोमाइल का

कीट एवं रोग प्रबंधन

कैमोमाइल की फसल पर विभिन्न प्रकार के कवक, कीट, वायरस आदि का प्रकोप होता है। इसमें *एल्बूगो ट्रगोपोगोंनिस, एरीसाइफी चिकोरियम, हैलिकोबेसिडियम परप्यूरियम* इत्यादि प्रमुख हैं। मार्च की शुरुआत में अल्टरनेरिया की वजह से पत्ती झुलसा रोग देखा गया है, जिसे बेनलेट 0.1 प्रतिशत के छिड़काव से नियंत्रित किया जा सकता है। एफिड की रोकथाम के लिए फॉस्फोथियान 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। भण्डारण के दौरान सूखे फूलों को कवक व कीटों से बचाने के लिए उपयुक्त नमी व तापमान पर संग्रहित करना चाहिए।

उपज

ताजे फूलों की उपज 3500 से 4000 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर तक प्राप्त होती है। प्रति कि.ग्रा. फूलों की संख्या को तापमान सबसे अधिक प्रभावित करता है। अप्रैल के दूसरे सप्ताह तक 1000 फूलों का वजन 80 से 130 ग्राम तक कम हो जाता है। ■

बहुपयोगी कैमोमाइल चाय

- कैमोमाइल चाय पीने से शरीर की पाचन क्षमता में सुधार होता है। यह गेस्ट्रोइंटेस्टाइनल स्वास्थ्य में सुधार करती है और दस्त व कब्ज की समस्याओं को कम करती हैं। इसमें एंटी इंफ्लेमेट्री गुण होते हैं, जो शरीर को स्वस्थ रखते हैं और एसिडिटी तथा अल्सर से राहत दिला सकते हैं।
- कैमोमाइल चाय में एपिगेनिन होता है, जो एक एंटीऑक्सीडेंट है। यह इंसोमनिया, नींद आने में असमर्थता आदि से छुटकारा पाने में मदद करता है। सोने से पहले कैमोमाइल चाय का सेवन अच्छी नींद लेने में मददगार है।
- यह शरीर में शुगर के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करती है। रोजाना कैमोमाइल चाय का सेवन ब्लड शुगर के स्तर को कम करने में सहायता करता है।
- एंटीऑक्सीडेंट होने के कारण रोजाना कैमोमाइल चाय का सेवन शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाता है। यह शरीर को सर्दी, बुखार, वायरल संक्रमण से बचाने में सहायक है।
- कैमोमाइल चाय रक्तचाप और कोलेस्ट्रॉल के स्तर में उतार-चढ़ाव को कम करती है, जिससे हृदय से जुड़ी समस्याएं कम हो सकती हैं।

मिर्च उत्पादन की उन्नत तकनीक

सन्तोष चौधरी[1], नन्द किशोर जाट[2], महेश चौधरी[3], अनोप कुमारी[4] और **गोगराज सिंह जाट[5]**

मिर्च एक महत्वपूर्ण मसाला एवं नगदी फसल है। भारत इसका सबसे बड़ा उत्पादक, उपभोक्ता एवं निर्यातक देश है। मिर्च के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में भारत का हिस्सा लगभग 40 प्रतिशत है। इसके कुल उत्पादन का लगभग 17 प्रतिशत निर्यात किया जाता है। मिर्च के हरे फल विटामिन 'ए' और 'सी' के अच्छे स्रोत हैं। मसाले के लिए मिर्च में चरपरापन होना जरूरी है। इसके फलों में तीखापन एक क्रिस्टेलाइन वाष्प एल्केलॉयड कैप्ससिन के कारण होता है, लेकिन कैप्सेसिन अकेला घटक नहीं है। यह बहुत से एमाइड्स का मिश्रण होता है, जिनको सामान्य तौर पर कैप्सेसिनाइड्स कहते हैं। हरी एवं लाल, दोनों ही, मिर्च भोजन को स्वादिष्ट बनाने के साथ-साथ उचित तीखापन देकर पाचनशीलता को भी बढ़ाती हैं। हरी मिर्च का उपयोग सलाद, मिर्च बड़ा, सब्जी, सॉस बनाने में तथा सूखी लाल मिर्च का उपयोग मसाले, अचार एवं ओलियोरेजिन के उत्पादन में किया जाता है। मिर्च में पाये जाने वाले तीखे पदार्थ 'कैप्सेसिन' तथा 'ओलियोरेजिन' का इस्तेमाल औषधि, आहार, सौन्दर्य प्रसाधन इत्यादि तैयार करने में किया जाता है।

[1]सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान) कृषि महाविद्यालय, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, (राजस्थान); [2]वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)-भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान); [3]विषय विशेषज्ञ (बागवानी) कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहपुर-शेखावटी, सीकर, (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर); [4]विषय विशेषज्ञ (बागवानी) कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर-नागौर (कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान); [5]वैज्ञानिक (सब्जी विज्ञान) सब्जी विज्ञान सम्भाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

मिर्च की खेती मुख्यतौर पर आंध्र प्रदेश, ओडिशा, महाराष्ट, कर्नाटक, तमिलनाडु और राजस्थान में की जा रही है। पश्चिमी राजस्थान में जोधपुर जिले के मथानिया क्षेत्र की मिर्च अपने विशेष स्वाद एवं तीखेपन के कारण देश में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी जानी जाती है। मिर्च की खेती यदि सही तरीके से करें, तो इससे अधिक उत्पादन लेकर अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है।

पोषण व औषधीय महत्व

हरी एवं लाल मिर्च, दोनों ही पौष्टिक गुणों से भरपूर होती हैं। मिर्च में विटामिन 'ए' तथा 'सी' के अलावा खनिज लवणों की भी प्रचुरता पायी जाती है। तथा औषधीय महत्व सारणी-1 तथा हरी मिर्च में पाए जाने वाले पोषक तत्वों को सारणी-2 में दर्शाया गया है।

जलवायु

मिर्च उष्ण तथा उपोष्ण जलवायु की फसल है। इसके लिए गर्म एवं आर्द्र जलवायु

लाभकारी मानी गई है। अत्यधिक ठंड और गर्मी, दोनों ही, इसके लिए हानिकारक हैं। फूल आते समय गर्म हवाएं अथवा पाला गिरने से पैदावार में कमी आ जाती है। इसकी खेती के लिए सामान्यत: 23 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान उत्तम पाया गया है। रात का तापमान 10 डिग्री सेल्सियस से कम हो जाता है, तो मिर्च में फलन प्रभावित होता है।

भूमि

सफल मिर्च उत्पादन के लिए उचित जल निकास वाली, बलुई दोमट मृदा, जो कि जीवांश पदार्थों से प्रचुर हो, उत्तम मानी गई है। इसकी खेती के लिए मृदा का पी-एच मान 6.0-7.5 के मध्य उचित पाया गया है।

पौधशाला की तैयारी

मिर्च में पौध तैयार करते समय ही कई तरह के कीटों व रोगों का आक्रमण हो जाता है, जिसके कारण पौधे कमजोर रह जाते हैं। फसल सें अच्छा उत्पादन लेने के लिए जरूरी है कि पौध स्वस्थ एवं रोगमुक्त हों। पौध तैयार करते समय स्थान का चयन, खेत की तैयारी, क्यारियां बनाना, मृदा शोधन, बीज उपचार, बीजों की बुआई, पोषक तत्व एवं पौध सुरक्षा इत्यादि को ध्यान में रखना बहुत आवश्यक होता है। एक हैक्टर खेत की पौध तैयार करने के लिए 200-250 वर्ग मीटर पौधशाला की आवश्यकता होती है। मृदा को भुरभुरी करने के बाद सड़ी-गली गोबर की खाद 40-50 कि.ग्रा. प्रति 10 वर्ग मीटर की दर से मृदा से अच्छी तरह मिला दें। पौध तैयार करने के लिए समतल क्यारियों की बजाय जमीन से 15-20 सें.मी. ऊंची उठी हुई छोटी-छोटी क्यारियां उपयुक्त रहती हैं। क्यारियां 1 मीटर से अधिक चौड़ी नहीं होनी चाहिए। इससे सिंचाई, खरपतवार हटाने एवं पौध संरक्षण आदि कार्य में सुविधा रहती है। प्रत्येक दो क्यारियों के बीच में 1.5 से 2 फीट जगह छोड़नी चाहिए, जिससे सिंचाई, जल निकास व कृषि कार्य आसानी से किया जा सके। साधारणत: क्यारियां 10 फीट लंबी, 3 फीट चौड़ी तथा 0.5 फीट ऊंची बनाते हैं। इन क्यारियों की मृदा भुरभुरी बारीक होनी चाहिए।

प्लास्टिक ट्रे में पौध उत्पादन

बीज बुआई एवं पौध संरक्षण

स्वस्थ एवं उन्नत किस्म का बीज लेकर बुआई से पूर्व किसी फफूंदनाशी दवा 2 ग्राम ट्राइकोडर्मा और 5-8 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से मिलाकर बीजोपचार करें। बीजों को पंक्तियों में बोना अच्छा रहता है। इससे नर्सरी में निराई, गुड़ाई में आसानी रहती है और बीज का वितरण भी एक सा रहता है। बीजों की बुआई 5 सें.मी. की दूरी पर पंक्ति बनाकर करें। बीजों के आकार के आधार पर 0.5 से 1 सें.मी. की गहराई पर बुआई करें। बीज बुआई के बाद उनके ऊपर वर्मीकम्पोस्ट एवं रेत 1:1 अनुपात के मिश्रण की हल्की परत बिछा दी जाती है, ताकि सिंचाई करते समय बीज इधर-उधर नहीं हो जाएं। सर्दियों में कम तापमान के कारण बीजों के शीघ्र अंकुरण के लिए क्यारियों को सूखी घास या पॉलीथीन की शीट से ढक देना चाहिए। इससे मृदा में नमी बनी रहती है तथा अंकुरण भी जल्दी होता है, लेकिन अंकुरण होते ही इसे हटा देना चाहिए। एक हैक्टर क्षेत्र के लिए पौध तैयार करने के लिए संकर किस्म के 250 से 300 ग्राम व मुक्त परागित किस्म के 300 से 400 ग्राम बीज पर्याप्त रहते हैं। विषाणुजनित रोगों से बचाव एवं वाहक कीटों को रोकने के लिए मिर्च की पौध 40 मेश के कीट अवरोधी नेटहाउस में भी तैयार की जा सकती है। मिर्च की वर्ष में तीन फसलें ली जा सकती हैं। प्राय: इसकी फसल खरीफ एवं गर्मी में ली जाती है।

रोपाई

नर्सरी में बुआई के 40 से 45 दिनों बाद पौध रोपण के लिए तैयार हो जाती है। रोपाई पंक्तियों में 60 × 30 सें.मी. की दूरी पर सांयकाल के समय करें एवं तुरंत बाद सिंचाई कर दें। पौधों को 40 ग्राम एजोस्पाइरिलम 2 लीटर पानी के घोल में 15 मिनट डुबोकर रोपाई करें।

श्यामव्रण या एंथ्रेक्नोज

रोग के आरम्भिक लक्षणों में पत्तियों पर छोटे-छोटे काले धब्बों दिखते हैं। रोग ग्रसित फलों पर काले धब्बे अनियमित आकार के बन जाते हैं और फल सड़ जाते हैं। इससे मिर्च की गुणवत्ता एवं बाजार मूल्य पर विपरीत असर पड़ता है। फलों पर रोग का आक्रमण उनके पकने की अवस्था में अधिक होता है। इसकी रोकथाम के लिए मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल कर 2 से 3 बार छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करें।

सारणी 1. मिर्च के औषधीय गुण

क्र.सं.	औषधीय गुण
1	एंटीऑक्सीडेंट की पर्याप्त मात्रा
2	कैल्शियम से भरपूर
3	रोग प्रतिरक्षा में बढ़ोतरी
4	वजन घटाने में सहायक
5	जीवाणुरोधी
6	मधुमेह निवारक
7	सूजन अवरोधी
8	भोजन के पाचन में सहायक
9.	त्वचा को आभामय और युवा रखने में सहायक
10	एंटी कार्सिनोजेनिक
11	दृष्टि को बढ़ाने में सहायक
12.	श्वसन प्रणाली पर सुखद प्रभाव

खाद व उर्वरक

मिर्च की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 20-25 टन गोबर की सड़ी हुई खाद या 5-10 टन वर्मीकम्पास्ट रोपाई के 15-20 दिनों पहले खेत में मिलानी चाहिए। इसके अलावा रासायनिक उर्वरकों में 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी एवं फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई के पूर्व एवं नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा रोपाई के 45-60 दिनों बाद देनी चाहिए।

सिंचाई प्रबंधन

पौध रोपाई के तुरन्त बाद पहली हल्की सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाइयों की संख्या मौसम, मृदा के प्रकार एवं फसल की किस्मों पर निर्भर करती है। पौधों की बढ़वार एवं फल निर्माण के समय मृदा में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए। खरीफ में सिंचाई, वर्षा की मात्रा के आधार पर आवश्यकतानुसार करनी चाहिए। सिंचाई जब भी करें, हल्की करें। मिर्च में क्यारी विधि की अपेक्षा ड्रिप सिंचाई पद्धति में कीटों एवं रोगों का प्रकोप कम होता है तथा पानी की भी बचत होती है।

मिर्च की खेती से बढ़ाएं आमदनी

फलों की तुड़ाई व उपज

किस्म के आधार पर फलों की तुड़ाई का सही समय उगाई जाने वाली किस्म पर निर्भर करता है। सामान्यत: रोपाई के लगभग 80-90 दिनों बाद हरी मिर्च तोड़ने योग्य हो जाती है। एक सप्ताह के अंतराल पर मिर्च तोड़ते रहना चाहिए। सूखी मिर्च के लिए फलों को 140 से 145 दिनों बाद, जब मिर्च का रंग लाल हो जाता है, तब तोड़ा जाता है। बार-बार मिर्च तोड़ने से फलन अधिक होता है। हरी मिर्च की पैदावार 150-200 क्विंटल प्रति हैक्टर तथा सूखी लाल मिर्च की उपज 15-25 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

मिर्च को सुखाना

सूखी लाल मिर्च का रंग व चरपराहट बनाये रखने के लिए फलों के पौधों पर पूरी

ड्रिप सिंचाई पद्धति है बेहतर

कीट अवरोधी नेटहाउस में तैयार पौध

प्लास्टिक ट्रे द्वारा लें स्वस्थ पौध

सारणी 2. हरी मिर्च में पाये जाने वाले पोषक तत्व (प्रति 100 ग्राम खाने योग्य भाग में)

क्र.सं.	पोषक तत्व	मात्रा
1	नमी	85.7 ग्राम
2	प्रोटीन	1.87 ग्राम
3	वसा	0.44 ग्राम
4	रेशा	1.5 ग्राम
5	कोलेस्ट्रॉल	0 मि.ग्रा
6	नियासिन	1.2 मि.ग्रा.
7	राइबोफ्लेविन	0.086 मि.ग्रा.
8	थायमीन	0.72 मि.ग्रा.
9	विटामिन 'ए'	952 आई.यू
10	विटामिन 'ई'	0.69 मि.ग्रा.
11	विटामिन 'सी'	100-115 मि.ग्रा.
12	पोटेशियम	322 मि.ग्रा.
13	कैल्शियम	14 मि.ग्रा.
14	कॉपर	0.129 मि.ग्रा.
15	लौह	1.03 मि.ग्रा.
16	मैग्नीशियम	23 मि.ग्रा.
17	मैंगनीज	0.187 मि.ग्रा.
18	फॉस्फोरस	43 मि.ग्रा.
19	सेलेनियम	0.5 माइक्रोग्राम
20	जिंक	0.26 मि.ग्रा.
21	कैरोटीन-α	36 माइक्रोग्राम
22	कैरोटीन-β	534 माइक्रोग्राम

खुले में मिर्च सुखाना

मिर्च को प्लास्टिक टनल में सुखाना

तरह पक कर मुरझाना शुरू होने पर तुड़ाई करनी चाहिए। मिर्च को सुखाने के लिए 22-25 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। परंपरागत रूप से मिर्च को तुड़ाई के बाद 8-10 दिनों तक छायादार स्थान पर रखा जाता है। पक्के साफ फर्श या पॉलीथीन शीट पर फैलाकर धूप में सुखाने के लिए रखकर दिन में 2-3 बार पलटते रहते हैं। परंतु फलों के लाल रंग को बनाये रखने के लिए फलों को सीधी धूप में नहीं सुखाना चाहिए। सीधे खुले मैदान में सुखाने से धूप के कारण मिर्च का रंग खराब हो जाता है। हल्की वर्षा या रात में ओस की नमी के कारण मिर्च में 'एफ्लाटोक्जीन' नामक जहरीला पदार्थ विकसित हो सकता है। अत: मिर्च को सुखाने के लिए उन्नत तकनीक के रूप में 'वाक-इन-टनल' का प्रयोग किया जाता है। 'वाक-इन-टनल' के निर्माण के लिए अर्द्धगोलाकार आकार में मुड़े हुए 1 इंच मोटे पी.वी.सी. पाइपों को जमीन में गाड़कर ऊपर से 200 माइक्रॉन की शीट से ढका जाता है। 'वाक-इन-टनल' की ऊंचाई लगभग 6 फीट, चौड़ाई लगभग 10 फीट एवं लंबाई आवश्यकतानुसार रखी जाती है। उत्पाद को सुखाने के लिए 'वाक-इन-टनल' में फैला दिया जाता है तथा रात में टनल के दोनों सिरों को प्लास्टिक शीट से पर्दे की तरह ढककर ओस या नमी से बचाव किया जा सकता है। सूखने के बाद मिर्च में 15 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं रहनी चाहिए।

भण्डारण

मिर्च का भण्डारण इस प्रकार करना चाहिए कि उसे नमी से बचाया जा सके। भरे हुए बोरों का गोदाम में ढेर लगाने से पहले

मिर्च की उन्नत किस्में

मिर्च में संकर व मुक्त परागित किस्में प्रचलित हैं। किसान भाई उगाने का उद्देश्य, भूमि, क्षेत्र विशेष के अनुसार इनमें से सिफारिश किस्म का चयन अधिक से अधिक लाभ अर्जित करने के लिए कर सकते हैं। कुछ महत्वपूर्ण प्रचलित किस्में एवं उनकी विशेषताएं निम्नानुसार हैं:

संकर किस्में

- **अर्का मेघना:** भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरू द्वारा विकसित यह एक नर बंध्य किस्म है। इसके पौधे लंबे, ओजस्वी एवं गहरे रंग के होते हैं। फल 10 सें.मी. लंबे व गहरे हरे रंग के होते हैं। इसकी परिपक्वता अवधि 150 से 160 दिनों की होती है। यह हरे एवं लाल दोनों तरह के फलों के लिए उपयुक्त किस्म है। हरी मिर्च 30-35 टन व सूखी लाल मिर्च 5-6 टन प्रति हैक्टर सें प्राप्त हो जाती है। यह चूर्णिल आसिता व वायरस के प्रति सहनशील होती है।

- **अर्का श्वेता:** इस किस्म का विकास भी भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरू द्वारा किया गया है। फल 13 सें.मी. लंबे एवं 1.2-1.5 सें.मी. मोटे होते हैं। यह किस्म विषाणु रोग के प्रति सहनशील है। हरी मिर्च का उत्पादन 30-40 टन एवं सूखी लाल मिर्च 4-5 टन प्रति हैक्टर प्राप्त हो जाती है।
- **काशी सुर्ख:** इस किस्म का विकास भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा किया गया है। पौधे लगभग 70-100 सें.मी. ऊंचे एवं सीधे होते हैं। फल 10-12 सें.मी. लंबे, हल्के हरे, सीधे तथा 1.5-1.8 सें.मी. मोटे होते हैं। प्रथम तुड़ाई पौध रोपण के 50-55 दिनों बाद मिल जाती है। यह फल सूखे एवं लाल दोनों प्रकार के लिए उत्तम किस्म है। हरी मिर्च का उत्पादन 20-25 टन एवं सूखी लाल मिर्च 3-4 टन प्रति हैक्टर तक मिल जाती है।
- **काशी अर्ली (सीसीएच-3):** इसके पौधे 60-75 सें.मी. लंबे तथा छोटी गांठों वाले होते हैं। फल 7-8 सें.मी. लंबे, सीधे, 1 सें.मी. मोटे तथा गहरे होते हैं। पौध रोपण के मात्र 45 दिनों में प्रथम तुड़ाई प्राप्त हो जाती है, जो सामान्य संकर किस्मों से लगभग 10 दिनों पहले होती है। हरे फल का उत्पादन 300-350 क्विंटल/हैक्टर प्राप्त होता है।

मुक्त परागित किस्में

- **पूसा सदाबहार:** भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित यह किस्म पत्ती मोड़क विषाणु, फल-सड़न, थ्रिप्स एवं माइट्स अवरोधी है। इसके पौधे लंबे व फल गुच्छों में लगते हैं। हरी मिर्च का उत्पादन 8-10 टन प्रति हैक्टर मिल जाता है।
- **पूसा ज्वाला:** इसके फल लंबे, पतले, मुड़े हुए, कच्ची अवस्था में हरे एवं पकने पर गहरे लाल होते हैं। यह किस्म थ्रिप्स, माइट एवं माहूं के प्रति सहनशील होती है। चरपराहट अधिक होने एवं छिलका पतला होने के कारण निर्यात के लिए उत्तम किस्म है। हरे फलों की औसत उपज 90-100 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।
- **काशी अनमोल:** इस किस्म के पौधे सीमित बढ़वार वाले (40-50 सें.मी.) और छातानुमा होते हैं। फल ठोस सीधे एवं 6-7 सें.मी. लंबे होते हैं। हरे फल के उत्पादन के लिए अच्छी किस्म है। फलों की औसत उपज 200 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।
- **आर.सी.एच.-1:** यह किस्म कृषि अनुसंधान केन्द्र, मंडोर, जोधपुर द्वारा विकसित की गई है। राजस्थान के शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए अच्छी प्रजाति है तथा खरीफ की फसल के लिए उपयुक्त है। यह किस्म सूखी मिर्च की अधिक उपज देती है और मसाले के लिए अधिक उपयोगी है।
- काशी गौरव, काशी सिन्दूरी, अर्का लोहित, आजाद मिर्च-1, भाग्यलक्ष्मी इत्यादि भी अच्छी उपज वाली मुक्त परागित प्रजातियां हैं।

लकड़ी के पट्टे लगाने चाहिए तथा बोरों को दीवार से 50-60 सें.मी. की दूरी पर रखना चाहिए। इससे फर्श व दीवारों की सीलन को रोका जा सकता है।

पादप सुरक्षा

मिर्च में कई तरह के कीट एवं रोगों का आक्रमण होता है। इसके कारण फसल को बहुत नुकसान हो जाता है। अत: जरूरी है कि सही समय पर इनकी पहचान करके इनका नियंत्रण किया जाए। कुछ महत्वपूर्ण कीट एवं रोगों का विवरण व उनके प्रबंधन के तरीके निम्नलिखित हैं:

सफेद मक्खी व पर्णजीवी (थ्रिप्स)

इन कीटों के शिशु व वयस्क दोनों ही पत्तियों के कोमल भागों से रस चूसकर नुकसान पहुंचाते हैं, जिसके कारण पत्तियां सिकुड़ जाती हैं तथा पौधों की बढ़वार रुक जाती है। सफेद मक्खी जितना नुकसान रस चूसकर नहीं करती, उससे कहीं अधिक विषाणु रोग को फैलाकर करती है। नियंत्रण के लिए नीम तेल 5 मि.ली. प्रति लीटर पानी या मैलाथियान 50 ई.सी. या इमिडाक्लोप्रिड 3 मि.ली./10 लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। 15-20 दिनों के बाद दोबारा छिड़काव करना चाहिए। रस चूसक कीटों के प्रकोप की निगरानी और नियंत्रण हेतु पीले चिपचिपे पाश (ट्रेप) 10 प्रति हैक्टर की दर से काम में लें।

सफेद लट

लटें (ग्रब) भूमि में रहकर जड़ों को खाती हैं, जिससे पौधे कमजोर होकर पीले पड़कर सूख जाते हैं। पूर्ण वयस्क लट मुड़ी हुई अर्द्धचन्द्राकार रूप में भूमि के अन्दर रहती है। मानसून या इससे पूर्व की भारी वर्षा एवं कुछ क्षेत्रों में खेतों में पानी लगने पर जमीन में भृगों (वयस्क/बीटल) का निकलना शुरू हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए गर्मी में खेत की गहरी जुताई करें तथा खेत की तैयारी के समय भूमि में 10 क्विंटल प्रति हैक्टर नीम की खली मिलाएं। पौध रोपाई से पूर्व कार्बोफ्यूरॉन 3 जी 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर पंक्तियों में डालकर मिला दें।

समय पर करें मिर्च की तुड़ाई

फलछेदक

इस कीट की लटें फलों में छेदकर अन्दर प्रवेश कर फलों को खाती हैं। इसके प्रकोप से फल सड़ जाते हैं। फलछेदक कीट के वयस्क का पता करने हेतु 5 फेरोमोन पाश प्रति हैक्टर की दर से काम में लें। *ट्राइकोग्रामा ब्रोसिलिएन्सिस* या *ट्राइकोग्रामा* किलोनिस अण्ड परजीवी को खेत में 50000 अण्डे प्रति हैक्टर की दर से छोड़ें। यह परजीवी फलछेदक कीट के अण्डों में अपने अण्डे देता है, जिससे फलछेदक कीट के अण्डे नष्ट हो जाते हैं। न्यूक्लियर पॉलीहाइड्रोसिस वायरस (एन.पी.वी.) के 250 एल.ई. के 1 लीटर प्रति हैक्टर का, पुष्पण से फलन तक तीन छिड़काव करने से फलछेदक कीट को कम किया जा सकता है। प्रकोप अधिक होने पर प्रति हैक्टर प्रोफेनफॉस 50 प्रतिशत ई.सी. 800 मि.ली. तथा क्लोरपायरिफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. 1200 मि.ली. को मिलाकर छिड़काव करें।

मूल ग्रंथि रोग सूत्रकृमि

यह रोग सूत्रकृमि द्वारा उत्पन्न होता है। इसके प्रकोप से पौधों की जड़ों में गांठें बन जाती हैं। इससे पौधों की बढ़वार रुक जाने से उत्पादन में भारी कमी आ जाती है। इसके नियंत्रण के लिए पौधों की रोपाई के स्थान पर 25 कि.ग्रा. कार्बोफ्यूरॉन 3 जी दवा प्रति हैक्टर की दर से मृदा में मिलाएं अथवा पौधों की जड़ों को 1 मि.ली. फॉस्फोमिडॉन 40 एस.एल. दवा प्रति लीटर पानी के घोल में आधा घण्टा भिगोकर खेत में रोपाई करें।

आर्द्रगलन

यह रोग 'पीथियम' या 'फाइटोफ्थोरा' नामक कवक से होता है। रोग का प्रकोप नर्सरी अवस्था में होता है। इसके कारण तने का हिस्सा काला पड़ जाता है व पौधे गिरकर मर जाते हैं। रोकथाम के लिए नर्सरी में बीजों की बुआई से पूर्व थीरम या कैप्टॉन 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। साथ ही नर्सरी को भूमि की सतह से 4 से 6 इंच ऊंची उठी हुई जगह पर बनायें, जिससे जल निकास ठीक ढंग से हो सके।

पर्ण कुंचन

यह विषाणुजनित रोग है। इसमें रोगग्रसित पौधे बौने रह जाते हैं। पत्तियां सिकुड़कर मुड़ जाती हैं व अनियमित आकार की हो जाती हैं। ग्रसित पौधों पर फल बहुत कम बनते हैं, जो छोटे व अनियमित आकार के होते हैं। रोकथाम के लिए रोगग्रसित पौधों को शुरू में ही नष्ट कर दें। रोगवाहक कीट के जैविक प्रबंधन के लिए मिर्च में बाजरा, तिल, गेहूं व जौ जैसी नॉन होस्ट बैरियर फसल लगाएं। रोग का प्रसारण कीटों द्वारा होता है अत: इसे फैलने से रोकने के लिए डाइमिथोएट 30 ई.सी. या मिथाइल डिमेटोन 25 ई.सी. एक मि.ली. लीटर प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 20 दिनों बाद पुन: दोहरायें। फूल आने के बाद उपरोक्त कीटनाशी के स्थान पर मैलाथियॉन 50 ई. सी. एक मि.ली. प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। ■

मूल ग्रंथि रोग सूत्रकृमि

पर्ण कुंचन (लीफ कर्ल) रोग

मुनाफा

गुणवत्तायुक्त सब्जी पौध उत्पादन से बेहतर आय

निधि त्यागी* और **अशोक कुमार गुप्ता****

स्वस्थ पौध अधिक पैदावार का मुख्य आधार है। सब्जी फसलें जैसे-टमाटर, बैंगन, शिमला मिर्च, मिर्च, गांठगोभी, पत्तागोभी, फूलगोभी, लेट्यूस, सेलेरी, चाइनीज गोभी व प्याज में बिना स्वस्थ पौध रोपण के बेहतर उत्पादन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। यदि हम इन महंगे छोटे बीजों की बुआई सीधे खेत में करते हैं, तो एक तरफ अंकुरण कम होता है, वहीं दूसरी तरफ पौधों के बढ़वार में काफी समय लगता है। इससे उत्पादन प्रभावित होता है। अत: कम लागत से अच्छा उत्पादन लेने के लिए पौधशाला में पौध तैयार करना अनिवार्य होता है।

पौधशाला प्रबंधन के लाभ

- पौधशाला में पौध काफी जल्दी तैयार होती है और यह पौध बाजार में ऊंची कीमत पर बिकती है। यहां पौध तैयार करना आर्थिक रूप से किसानों/कृषि उद्यमियों के लिए अधिक लाभदायक सिद्ध हो सकता है।
- बीज बुआई करने से अंकुरण व पौध के विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियां पौधशाला में प्रदान करना संभव है।
- कीट व रोगाणुमुक्त स्वस्थ पौध तैयार करना संभव है तथा छोटे से क्षेत्र में पौधों की बेहतर देखभाल करना आसान है।
- पौध तैयार करने से भूमि व श्रम की बचत होती है। छोटी जोत वाले सीमान्त कृषक जिनके पास सीमित सिंचाई के साधन हैं, लाभान्वित हो सकते हैं।
- ऐसी दशा में यदि दैनिक शुद्ध लाभ का आकलन हो, तो नर्सरी से उतना मुनाफा मिल जाता है, जितना कि सम्पूर्ण फसल लेने से।
- सब्जी बीज, विशेष रूप से, संकर बीज बहुत महंगा होता है। इसलिए नर्सरी में बुआई करके बीज की बचत कर सकते हैं।

पौधशाला के क्षेत्र की भूमि मुलायम, आसानी से पानी सोखने वाली तथा अच्छे जल निकास वाली होनी चाहिए। दोमट या बलुई दोमट मृदा, जो उचित मात्रा में पोषक पदार्थ के अम्लीयता व क्षारीयता से मुक्त हो, का चयन करना चाहिए। मृदा अधिक सख्त हो, तब इसे बालू, रेत या अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद डालकर तैयार करें, ताकि मृदा में जलधारण क्षमता और जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ सके।

मृदा शोधन

मृदा सौरीकरण विधि

पौधशाला की मृदा को सूर्य के प्रकाश में शोधन करने को मृदा सौरीकरण (सोलराइजेशन) कहते हैं। इस विधि से पौधशाला में जहां पौध उगानी हो, वहां क्यारी बनाकर उसकी जुताई कर दें। हल्की सिंचाई करके थोड़ा गीला कर दें, ताकि मृदा में नमी बनी रहे। इसको पारदर्शी 200 गेज की पॉलीथीन की चादर से ढककर चारों तरफ के किनारे मिट्टी से दबा देते हैं, ताकि पॉलीथीन के अन्दर से हवा तथा वाष्प न निकले। इस तरह से लगभग 4-6

मृदा सौरीकरण

*वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता, राष्ट्रीय कृषि उच्चतर शिक्षा परियोजना, **अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर-303329, जयपुर (राजस्थान)

पत्तीमोड़क विषाणु

विषाणु रोग स्वयं नहीं फैलता बल्कि इसको फैलाने वाला दूसरा वाहक होता है, जिसे सफेद मक्खी के नाम से जाना जाता है। यह अत्यन्त छोटी सफेद रंग की मक्खी है, जो विषाणु रोग के कीटाणु को एक पौधे से दूसरे पौधे पर फैलाती है। इस रोग से प्रभावित पत्तियां सिकुड़कर टेढ़ी-मेढ़ी, मोटी, घुमावदार व छोटी हो जाती हैं। इससे बचाव के लिए पौधशाला में बीज की बुआई से पहले फ्यूराडान (3 जी.) 5 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से मृदा में छिड़ककर मिला देते हैं। बीज जमने के बाद इमिडाक्लोप्रिड दवा की 0.3 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने के बाद क्यारी को एग्रोनेट (जाली) से ढकते हैं। ढकने के लिए आसपास उपलब्ध बांस की पतली डालियां या लोहे की 3 सूत मोटी छड़ को धनुषाकार रूप में 1.0 से 1.0 मीटर की दूरी पर क्यारियों के किनारे पर गाड़ दें तथा उसके ऊपर एग्रोनेट को लाकर चारों तरफ से किनारे को मृदा से दबा दें, ताकि कोई कीट या मक्खी जाली के अन्दर प्रवेश न करे। सिंचाई इत्यादि जाली के ऊपर से ही हजारे की सहायता से करते रहें।

पौधशाला प्रबंधन

सारणी 1. पौध तैयार करने के लिए बीज की मात्रा तथा क्षेत्र की आवश्यकता

क्र. सं.	सब्जी का नाम	बीज की मात्रा (ग्राम)		क्षेत्र की आवश्यकता (वर्गमीटर)	
		वास्तविक	संस्तुत	संस्तुत	वास्तविक
1.	टमाटर (संकर)	200-250	300	50-100	50-60
2.	टमाटर (मुक्त परागित)	300-350	500-700	100-125	50-60
3.	बैंगन	200-250	400-700	100-125	50-60
4.	मिर्च	200-300	500-600	100-150	50-60
5.	शिमला मिर्च	300-400	500-1000	100-150	60-80
6.	फूलगोभी (अगेती)	300-400	700-900	100-150	60-80
7.	फलूगोभी समय से बुआई	250-300	400-500	100-150	60-80
8.	पत्तागोभी	400-800	250-300	150-150	60-80
9.	गांठगोभी	600-800	750-1000	150-200	80-100

सारणी 2. विभिन्न सब्जी फसलों में अंकुरण एवं रोपाई में सामान्यत: लगने वाला समय

क्र.सं.	सब्जी फसल	अंकुरण में लगने वाला समय (दिनों में)	रोपाई के समय उम्र (सप्ताह में)
1.	गोभीवर्गीय	5 से 10	4 से 6
2.	टमाटर	5 से 10	3 से 4
3.	प्याज	10 से 15	6 से 8
4.	लेट्यूस	6 से 10	6 से 8
5.	बैंगन	7 से 12	3 से 4
6.	सेलेरी	6 से 10	6 से 8
7.	मिर्च	10 से 15	3 से 4

सप्ताह तक छोड़ देते हैं। यह कार्य 15 अप्रैल से 15 जून तक किया जा सकता है। यदि पॉलीथीन के अन्दर का तापमान 48 से 52 डिग्री सेल्सियस तक बना रहता है, तो पौधशाला का रोग से बचाव अच्छी तरह हो सकता है। आवश्यकतानुसार 4-6 सप्ताह बाद पॉलीथीन की चादर हटाकर मृदा की अच्छी तरह गुड़ाई करके क्यारियां बनाते हैं और फिर बीज की बुआई करते हैं। यह विधि उन स्थानों पर अधिक फायदेमन्द है, जहां पर गर्मी के महीने में सूर्य के प्रकाश की तीव्रता अधिक होती है और दिन का तापमान 45 डिग्री सेल्सियस तक जाता है। इसके साथ ही साथ शुष्क गर्मी की अवधि लंबी होती है। सौरीकरण से रोगकारक मर जाते हैं तथा मित्र जैविक नियत्रंक फफूंदी की संख्या बढ़ जाती है। इसका सबसे बड़ा फायदा नर्सरी में खरपतवार नियंत्रण में होता है। इससे खरपतवार लगभग 19 दिनों तक बिलकुल नहीं दिखाई देते हैं। मृदा सौरीकरण से मृदा में उपस्थित मूल सूत्रकृमियों की संख्या में कमी हो जाती है। पौधशाला में जीवाणु धब्बा रोग से लगभग पूर्ण रूप से मुक्ति मिल जाती है। सौरीकरण से पौधों के लिए मृदा में उपस्थित फॉस्फोरस, पोटाश तथा अन्य सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। इससे पौध की बढ़वार अच्छी होती है।

स्वस्थ पौध

पॉलीथीन में तैयार होती पौध

जैविक विधि

पौधशाला में आर्द्रगलन रोग से बचाव करने के लिए मृदा सौरीकरण एवं रसायन के अलावा जैविक विधि द्वारा मृदा शोधन भी काफी फायदेमंद है। पौधशाला में ट्राइकोडर्मा की विभिन्न प्रजातियों जैसे *स्यूडोमोनास फ्लोरोसेन्स, एस्परजिलस नाइजर* आदि का प्रयोग बीज एवं भूमि शोधन में किया जा सकता है। जैव पदार्थों के उपयोग करने पर कई प्रकार की सावधानियों की जरुरत पड़ती है। सर्वप्रथम जैव पदार्थ उस क्षेत्र विशेष का होना चाहिए, जिससे कि उसकी

मृदा में बढ़वार अच्छी तरह हो। इसके लिए पौधशाला में कम्पोस्ट तथा अन्य कार्बनिक खाद की मात्रा होनी चाहिए। जिससे जैव पदार्थ की अच्छी तरह वृद्धि हो सके। जिस जैव नियंत्रक पदार्थ का प्रयोग करना है, उसमें उसके जीवित तथा सक्रिय बीजाणु की पर्याप्त मात्रा होनी आवश्यक है। इसके प्रयोग के कुछ दिनों तक पौधशाला में वर्षा एवं धूप से बचाव करने की व्यवस्था होनी चाहिए। पौधशाला में किसी रसायन का प्रयोग बिना तकनीकी जानकारी के नहीं करना चाहिए। जैव नियंत्रक मिलाते समय पौधशाला में मृदा में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। यह ध्यान रहे कि मृदा गीली अवस्था में भी न हो। जैविक विधि से मृदा शोधन करने से पौधों की बढ़वार शीघ्र हो जाती है। इसका प्रयोग दो तरह से किया जाता है। पौधशाला को अच्छी तरह तैयार करके उसमें मिश्रित जैव नियंत्रक पदार्थ 10 से 25 ग्राम प्रति मीटर की दर से मृदा में अच्छी तरह मिला दें। इसके एक या दो दिन बाद बीज की बुआई करें। जैव नियंत्रक से बीज का शोधन भी किया जाता है। इसके लिए 6 से 10 ग्राम तैयार मिश्रित जैव पदार्थ प्रति कि.ग्रा. की दर से इस तरह बीज में मिलायें कि पूरा का पूरा जैव नियंत्रक बीज की सतह पर चिपक जाए। इसके बाद उसे थोड़ी देर के लिए छाया में फैलाकर क्यारियों में बुआई करें। दूसरी विधि में बीज को शुद्ध जैव नियंत्रण से शोधित किया जाता है। बीज बुआई के बाद पौधाशाला को अधिक तापमान और अधिक वर्षा से बचाना चाहिए।

रासायनिक विधि

सारणी 3. एक हैक्टर बैंगन की नर्सरी तैयार करने के लिए लाभ-लागत अनुपात का विवरण

क्र.सं.	विवरण	लागत (रुपये)
1.	संकर बीज	12,500
2.	खाद (जैविक एवं रासायनिक)	7,500
3.	श्रम लागत	7,500
4.	ह्रास	6,000
5.	विविध	2,500
6.	कुल लागत	35,500
7.	कुल आय (27,778 पौध की आवश्यकता प्रति हैक्टर)/3.00 रुपये प्रति पौध	83,334
8.	कुल लाभ	83,334/ 35,500=2.35
9.	कुल प्रतिफल	1.35

एक भाग फार्मेल्डिहाइड तथा 100 भाग पानी को अच्छी तरह से मिलाकर फार्मालीन का घोल तैयार करें। इस घोल की 5 लीटर मात्रा का प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र की दर से अच्छी तरह छिड़काव करें। छिड़काव के तुरन्त बाद मृदा को पॉलीथीन की चादर या जूट के थैलों द्वारा 7 से 10 दिनों तक अच्छी तरह से ढक दें। मृदा को ढकने के 8 से 10 दिनों बाद चादर या थैलों को हटाकर मृदा को खुला छोड़ दें, ताकि वाष्पीकरण द्वारा गैस वातावरण में उड़ सके। इस उपचार से मृदाजनित रोग को सफलतापूर्वक नियंत्रित किया जा सकता है। यदि मृदा में सूत्रकृमियों की समस्या हो तब इनका नियंत्रण ईडीबी रसायनों द्वारा करना चाहिए।

पौधशाला की विविध क्यारियां

मौसम तथा जलवायु के आधार पर पौधे विभिन्न प्रकार की क्यारियों में तैयार किये जाते हैं। इनमें निम्नलिखित तीन प्रकार की क्यारियां अधिक प्रचलित हैं:

उठी हुई क्यारियां

इस प्रकार की क्यारियों का प्रयोग वर्षा ऋतु में पौध तैयार करने के लिए किया जाता है। अच्छी तरह से तैयार किए गए खेत में 1 से 1.5 मीटर चौड़ी तथा आवश्यकतानुसार लंबी (सामान्य तौर पर 5 से 6 मीटर से अधिक न रखें) और 15 से 20 सें.मी. जमीन से ऊपर उठी हुई क्यारियां बनानी चाहिए। प्रत्येक दो क्यारियों के बीच 50 से 60 सें.मी. चौड़ाई का रास्ता छोड़ना चाहिए ताकि पौधों में खाद, सिंचाई व निराई-गुड़ाई करने में आसानी रहे। इन क्यारियों में बिजाई से पूर्व 2.5 से 3 कि.ग्रा. प्रति वर्ग मीटर की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद अच्छी प्रकार से भूमि में मिला दें।

समतल क्यारियां

इन क्यारियों का प्रयोग गर्मियों तथा पतझड़ ऋतु में पौध तैयार करने के लिए किया जाता है। क्यारियों का आकार तथा माप उपरोक्त वर्णित क्यारियों के अनुसार ही रखें।

दबी या गहरी क्यारियां

सर्दी ऋतु में पौध तैयार करने के लिए इस प्रकार की क्यारियों की आवश्यकता पड़ती है। खेत की तैयारी व क्यारियों का आकार तथा माप उपरोक्त की तरह रखते हैं। ये धरातल से 20-25 सें.मी. गहरी बनायी जाती हैं। इस प्रकार जल्दी पौध तैयार करने तथा पौधों का पाले से बचाव के लिए इन क्यारियों का प्रयोग उत्तम रहता है। मिर्च, प्याज तथा कद्दूवर्गीय फसलों के विभिन्न पौधे पॉलीहाउस

तैयार होती पौध पर पानी का छिड़काव

तथा नेटहाउस में सुगमतापूर्वक तैयार किए जा सकते हैं।

बीज चयन

बीज बोने से पहले बीज की अंकुरण क्षमता, भौतिक शुद्धता व रोग और कीटों से मुक्त होने का अच्छी तरह से निरीक्षण कर लेना चाहिए। बीच हमेशा विश्वसनीय स्रोत से ही खरीदने चाहिए।

बीज की मात्रा एवं स्थान की आवश्यकता

रोपण के लिए विभिन्न सब्जियों में अलग-अलग बीजों की मात्रा व स्थान की आवश्यकता पड़ती है। यह मात्रा बीज के आकार, उसकी गुणवत्ता, जमाव की क्षमता व बीज बोने के समय पर निर्भर करती है। सारणी-1 में बीज की मात्रा व पौधशाला में बोने के लिए आवश्यक क्षेत्र का विवरण दिया गया है।

बीजोपचार

बीज को रोगों व कीटों से बचाने के लिए रसायनों द्वारा उपचार करना बीजोपचार कहलाता है। इसके लिए बीजों को फफूंदीनाशक तथा कीटनाशक दवाइयों द्वारा उपचारित करके बोएं। सामान्य तौर पर बीजों को कवकों से लगने वाले रोगों से बचाने के लिए कार्बेण्डाजिम, मैंकोजेब इत्यादि रसायन प्रयोग किए जाते हैं। रसायनों की 2 ग्राम मात्रा को प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बुआई करें। दवा को बीज में अच्छी प्रकार मिलाने के लिए मृदा या लकड़ी के ढक्कनदार बर्तन का प्रयोग करें। दवा व बीज बर्तन में डालकर ढक्कन बन्द कर दें।

अच्छी प्रकार से हिलाएं, ताकि दवा बीज के चारों तरफ अच्छी प्रकार चिपक जाए। बीज को बर्तन से बाहर निकाल कर तैयार क्यारी में बुआई करें। इसी प्रकार से बुआई से पूर्व बीज को कीटनाशक एवं राइजोबियम कल्चर द्वारा भी उपचारित किया जा सकता है। परन्तु तीनों से बीज को उपचारित करने के लिए क्रमशः पहले कीटनाशक, फफूंदीनाशक तथा अंत में जैविक नियंत्रक से उपचारित करने के बाद इसे अच्छी तरह छाया में सुखाकर बुआई करनी चाहिए।

बीज बुआई

छिटकवां विधि

क्यारियों में बीज की बुआई किसान भाई ज्यादातर छिटकवां विधि से करते हैं। इससे बीज एक समान नहीं गिरता और जमाव होने पर पौधे किसी-किसी स्थान पर घने होने के कारण तने पतले व लंबे हो जाते हैं। कई पौधे बहुत दूर-दूर हो जाते हैं। तने की लंबाई अधिक व पत्तियों का वजन ज्यादा होने से जड़ों के पास से पौधे गिरने लगते हैं, जो पौधा तैयार भी होता है वह पतला व लंबा होता है। रोपण के बाद मुख्य खेत में उचित बढ़वार नहीं कर पाता, परिणामस्वरूप फलत मारी जाती है। यदि छिटकवां विधि से ही पौध तैयार करनी हैं, तो यह ध्यान रखें कि लगभग 1.0 सें.मी. की दूरी पर बुआई करें या पौधे जमाव के बाद 1.0 सें.मी. की दूरी पर पौधे छोड़कर अन्य को उखाड़ दें।

पंक्तियों में बीज बुआई

यह विधि सर्वोत्तम मानी जाती है, क्योंकि सभी पौधे लगभग एक समान दूरी पर रहने के कारण स्वस्थ व मजबूत होते हैं। इस विधि में सर्वप्रथम क्यारी की चौड़ाई के समानान्तर 5 सें.मी. की दूरी पर 0.5 सें.मी. गहरी पंक्तियां बना लेते हैं। इन्हीं पंक्तियों में बीज लगभग 1.0 सें.मी. की दूरी पर डालते हैं। बीज बोने के बाद उसे कम्पोस्ट, मृदा व रेत के मिश्रण (1:1:1) से ढक देते हैं। इस प्रकार से तैयार पौधे घने न होने के कारण पदगलन रोग की समस्या से बच जाते हैं और पौधे स्वस्थ तथा मजबूत होते हैं।

नर्सरी में तैयार पौध

बीजों को ढकना

क्यारियों में बीज बुआई करने के बाद उनको ढकना अत्यन्त आवश्यक है। अतः मृदा के साथ सड़ी हुई गोबर/कम्पोस्ट की खाद व बालू तीनों को बराबर अनुपात में मिलाकर (1:1:1) क्यारी में इस प्रकार डालें कि सभी बीज ढक जाएं और कोई बीज खुला न दिखाई पड़े। यह ध्यान रखें कि इस मिश्रण को 5 से 6 ग्राम थीरम या कैप्टॉन प्रति कि.ग्रा. की दर से शोधित अवश्य कर लें अन्यथा पूरी मेहनत, जो भूमि और बीजशोधन के लिए की गई है,व्यर्थ चली जायेगी। केवल मिट्टी से इसलिए नहीं ढका जाता कि मृदा, सिंचाई द्वारा पानी पाकर सख्त हो जायेगी और बीज का जमाव ठीक ढंग से नहीं हो पायेगा।

क्यारियों को ढकना

क्यारी में बीजों को उर्वरक मिश्रण से ढकने के बाद क्यारी को स्थानीय स्तर पर उपलब्ध पुआल, सरकण्डा, सरपत, गन्ने के सूखे पत्ते, नरई या अन्य घास-फूस की पतली तह से ढकते हैं। इससे नमी बनी रहे और सिंचाई करने पर पानी सीधे ढके हुए बीजों पर न पड़े अन्यथा मिश्रण बीजों पर से हट जाएगा और बीज का जमाव प्रभावित होगा। इस प्रकार से बीज को तेज धूप व पक्षियों से बचाया जा सकता है। जहां तक हो सके प्रयास करना चाहिए कि शुरू के पांच से छः दिनों तक हजारे की सहायता से हल्की सिंचाई करें ताकि बीज ज्यादा पानी पाकर बैठ न जाएं। यदि वर्षा ऋतु का समय हो और वर्षा होने का अंदेशा हो तो 5-6 दिनों तक वर्षा के समय क्यारी को पॉलीथीन की चादर से ढकें। इससे वर्षा का पानी क्यारियों पर नहीं पड़ेगा और वर्षा समाप्त होते ही पॉलीथीन की चादर हटा दें। ध्यान रहे कि यह क्रिया शुरू के 5-6 दिनों तक ही प्रभावी होती है। यदि इसके बाद भी आवश्यकता पड़े, तो क्यारी के चारों किनारों की तरफ 2.5 से 3 फीट ऊंची खूटियां गाड़कर पॉलीथीन जमीन की सतह से थोड़ा उठा दें अन्यथा जमे हुए पौधे टूट जाएंगे। यदि आसमान साफ हो और बहुत तेज धूप हो रही हो, तो क्यारी को छाया प्रदान करने वाली जाली, जो हरे या हरे काले रंगों की अलग-अलग कम या ज्यादा छाया वाली आती है, खंभे गाड़कर उस पर फैलाकर क्यारी को छाया प्रदान करें। इस प्रकार उचित ढकाव करने से पौधे सुरक्षित रहते हैं।

सिंचाई

प्रारम्भ में 5-6 दिनों तक क्यारी की फव्वारे की सहायता से हल्की सिंचाई करें व बीज जमने के बाद आवश्यकतानुसार खुली सिंचाई कर सकते हैं। वर्षा ऋतु के समय जब बारिश हो रही हो, तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती, बल्कि क्यारी की नालियों में उपस्थित अधिक पानी पौधशाला से बाहर निकालना चाहिए। पौधे उखाड़ने के 4 से 5 दिनों पूर्व सिंचाई बन्द कर दें, ताकि पौधों में प्रतिकूल वातावरण सहन करने की क्षमता विकसित हो जाये व पौधे कठोर हो जाएं। पौध उखाड़ने से पहले हल्की सिंचाई कर दें। इससे पौधे आसानी से उखड़ जाते हैं और जड़ें टूटती नहीं।

क्यारियों से घास-फूस की परत (पलवार) हटाना

क्यारियों से घास-फूस की परत, जिससे बीज बुआई के बाद ढका गया था, को समय से क्यारियों से हटा लेना चाहिए। यह सावधानीपूर्वक देखना चाहिए कि जैसे ही

प्रमुख सावधानियां

- पौधों को उखाड़ने से पूर्व खेत में अच्छी तरह पानी दें, ताकि पौध उखाड़ते समय जड़ों को कम से कम नुकसान पहुंचे।
- पौध उखाड़ने के बाद जड़ों में गीली मृदा का लेप लगा लें, ताकि जड़ें सूखने न पायें।
- पौधों को उखाड़ने के तुरन्त बाद पौधों की रोपाई करें। जहां तक सम्भव हो पौधों की रोपाई शाम के समय करनी चाहिए।
- पौधों की रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।
- सभी कीटनाशक व फफूंदनाशक दवाओं को बच्चों की पहुंच से दूर रखें। दवा के प्रयोग के समय नाक व मुंह कपड़े से ढककर रखें व आंखों पर चारों तरफ से बन्द चश्मा पहनें। शरीर का कोई अंग खुला न रहे।
- छिड़काव करते समय यह ध्यान रखें कि तेज हवा न चल रही हो।

पौध पदगलन (डैम्पिंग ऑफ) से प्रभावित पौधे

50 प्रतिशत बीजों से सफेद धागेनुमा आकार (अंखुआ) निकलता दिखे अथवा पुआल या सरपत, जिससे भी क्यारी ढकी हो, हटा लें। मूलांकुर (अंखुआ) बड़ा होने पर पौधा कमजोर होकर जड़ के पास से ही गलकर गिरने लगता है। विभिन्न सब्जियों में यह अवस्था अलग-अलग समय से आती है, जो सारणी-2 में दर्शाई गई है।

खरपतवार नियंत्रण

क्यारियों में यदि खरपतवार उग आयें, तो उन्हें बराबर निकालते रहना चाहिए। व्यावसायिक स्तर पर पौधशाला तैयार करते समय खरपतवारनाशी जैसे स्टाम्प (पेन्डीमीथेलीन) की 3 मि.ली. मात्रा/लीटर पानी की दर से घोलकर बीज बुआई के 48 घण्टे के अन्दर अच्छी तरह छिड़क देते हैं। इससे खरपतवार की समस्या का नियंत्रण हो जाता है और यदि बाद में खरपतवार उगते हैं, तो उन्हें निकाल देते हैं।

आवश्यकता से अधिक घने पौधों को निकालना

यदि क्यारी में पौधे अधिक घने उग गए हों, तो स्वस्थ पौधे तैयार करने के लिए 1.0 से 1.5 सें.मी. की दूरी पर पौधे छोड़कर अधिक घने पौधों को छोटी अवस्था में ही उखाड़ दें अन्यथा पौधों के तने पतले हो जाएंगे और कमजोर बने रहेंगे। पौधे ज्यादा घने होने के कारण पदगलन नामक रोग लगने की भी आशंका अधिक रहती है। घने पौधे निकालने से प्रत्येक पौधे को उचित रूप से सूर्य का प्रकाश, पोषक तत्व व हवा मिलती रहेगी। यदि कोई रोग खेत में लग रहा है, तो घने पौधे निकाल देने से स्पष्ट रूप से दिखलाई पड़ जाता है। सुरक्षात्मक उपाय कर पौधों को बचा सकते हैं।

पौध पदगलन

पौधशाला में प्रायः यह देखा जाता है कि पौधे पदगलन रोग में विभिन्न फफूंदियों (जैसे-पीथियम, राइजोक्टोनिया, फाइटोफ्थोरा या फ्यूजेरियम) से संक्रमित हो जाते हैं और जमीन की सतह से गल कर गिरने लगते हैं। देखते ही देखते ज्यादातर पौधे जड़ों के पास से गलकर जमीन पर गिर जाते हैं और सूख जाते हैं। बीज और पौधशाला की मृदा का उपचार करने के उपरान्त ही बीज की बुआई करें। बीज जमाने के बाद इस रोग का प्रकोप होने पर बचाव के लिए कैप्टॉन या थीरम नामक दवा की 2.5 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर पौधशाला की मृदा को तर करें। इससे रोग का फैलाव रुक जाता है। उपरोक्त के बावजूद भी पौधे गल के गिर रहे हों, तो मिश्रण (मृदा, गोबर की सड़ी खाद व बालू 1:1:1 अनुपात में) को थीरम या कैप्टॉन से उपचारित कर क्यारियों में, पौधा जिस ऊंचाई से गिर रहा है, उससे जरा ऊपर तक डाल दें, तो पौधे गलकर नहीं गिरते। गलने वाले कमजोर स्थान पर मृदा डाल देने पर गलने वाले स्थान के ऊपर से नयी जड़ें निकल आती हैं और पौधा मरने से बच जाता है।

जीवाणु धब्बा

वर्षा ऋतु के मौसम में पौध पर जीवाणु धब्बा रोग बहुत लगता है। पत्तियों पर काले धब्बे बन जाते हैं। इस अवस्था में स्ट्रेप्टोसाइक्लीन दवा 150 पी.पी.एम. (150 मि.ग्रा./लीटर पानी) का घोल बनाकर एक बार अवश्य छिड़काव करें।

रोपण से पूर्व पौधों का उपचार

पौध रोपण के लिए उखाड़ने से एक दिन पूर्व पौधशाला की क्यारियों में कीटनाशक और फफूंदनाशक दवा का छिड़काव अवश्य कर दें, ताकि रोपण के बाद पौधों को कीट व रोगों से बचाया जा सके। इसके लिए 1 मि.ली. रोगर या मेटासिस्टॉक्स और 2.5 ग्राम मैन्कोजेब प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर पौधों के ऊपर छिड़काव करें।

रोपण से पूर्व पौधशाला में पौधों को कठोर बनाना

नियंत्रित वातावरण से प्राकृतिक वातावरण में ले जाने के लिए पौधों को वातावरण के प्रति कठोर बनाना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए रोपण से 6 से 7 दिनों पूर्व क्यारियों की सिंचाई बन्द कर दें। यदि पौधे विभिन्न प्रकार के गमलों, ट्रे, कुल्हड़, काफी कप इत्यादि में लगाए गये हों, तो उन्हें एक सप्ताह पूर्व से ही नियंत्रित वातावरण या कमरे से निकाल कर कुछ समय के लिए धूप में रखें। धीरे-धीरे इसकी अवधि बढ़ायें, ताकि पौधा रोपण के पश्चात अच्छी प्रकार विकसित हो सके। पौधों को कठोर बनाने के लिए 1 प्रतिशत घुलनशील उर्वरक के घोल (10 ग्राम प्रति लीटर पानी) को पौधों पर छिड़क सकते हैं। कभी-कभी खेत खाली न होने की दशा में, यदि पौधा तेजी से बढ़ना जारी रखे, तो सिंचाई बन्द करके सुबह व शाम के समय क्यारी के पौधों को रस्सी की सहायता से दोनों तरफ पकड़ कर क्यारी के एक किनारे से दूसरी तरफ व दूसरे किनारे से पहली तरफ खींचना चाहिए। इससे पौधों की बढ़वार रुक जाती है।

उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में विदेशी सब्जी उत्पादन

अंकित*, सुनील कुमार सिंह*, अजिताभ बोरा*, बैकुंठ ज्योति गोगई* और **संजय कुमार द्विवेदी***

किसी विशेष क्षेत्र में पाई जाने वाली दुर्लभ सब्जियां, जो भारतीय नहीं हैं, को विदेशी सब्जियां कहा जाता है। ये विदेशी सब्जियां स्वाद और खाना पकाने के तरीकों में ज्यादा सरल होती हैं। सुपर बाजारों के खुलने के कारण भारत में इनकी मांग बढ़ गई है। विदेशी सब्जियों में ब्रोकली, लाल पत्तागोभी, चाइनीज पत्तागोभी, पाक-चोई, सलाद, सेलेरी, केल, स्विस चार्ड, रूबर्ब चार्ड, अजमोद (पार्सले), जुकिनी, यूरोपीयन खीरा, बेबीकॉर्न, बेबी गाजर, चेरी टमाटर व विभिन्न रंगों वाली शिमला मिर्च आदि शामिल हैं।

उच्च पौष्टिक मूल्य और असाधारण स्वाद, विदेशी सब्जियों को आकर्षक बनाता है। ये सब्जियां कैलोरी में कम और पोषक तत्वों जैसे-प्रतिऑक्सीकारक, रेशा, विटामिन और खनिज लवणों में अपेक्षाकृत समृद्ध होती हैं। इससे ये महानगरों और स्थानीय लोगों में बहुत लोकप्रिय हो गई हैं। इनमें से कुछ पत्तेदार सब्जियां जल्दी खराब होने वाली होती हैं, जिसके कारण उनके त्वरित परिवहन की आवश्यकता होती है। परिनगरीय क्षेत्रों में कई जागरूक किसान अब इन सब्जियों को बड़े पैमाने पर उगा रहे हैं और अधिक आय अर्जित कर रहे हैं।

उपयुक्त जलवायु

ठंडा और नम मौसम विदेशी सब्जियों की खेती के लिए सर्वोत्तम होता है। इन सब्जियों की उचित वृद्धि एवं बढ़वार के लिए उपयुक्त तापमान 15-20 डिग्री सेल्सियस सही रहता है। ये सब्जियां पाला और अधिक सर्दी सह सकती हैं। दोमट मृदा जिसका पी-एच मान 6.5 से 7.5 हो, इन सब्जियों की बढ़वार के लिए सबसे उपयुक्त होता है।

खेत की तैयारी

दो से तीन बार 15 सें.मी. गहरी जुताई कर खेत समतल कर लें। जुती हुई भूमि को इच्छित आकार की क्यारियों में बांट लें। पौधशाला बनाने के लिए क्यारियां ऐसे स्थान पर बनाएं, जो अपेक्षाकृत ऊंची हों और सिंचाई जल सुगमता से उपलब्ध

ग्रीनहाउस में पाक-चोई (पूसा प्राइड व चॉको, 9500 फीट)

*रक्षा अनुसंधान प्रयोगशाला (डी.आर.डी.ओ.), तेजपुर-784001 (असोम)

हो। मृदाजनित रोग (आर्द्र गलन) एवं कीटों (कटुआ कीट) की रोकथाम के लिए मृदा को सौर तापीकरण (पलवार बिछाकर) या कैप्टॉन या फायटोलोन (0.1 प्रतिशत विलयन) या फार्मेलिन (4 प्रतिशत विलयन) से 3 लीटर प्रति वर्ग मीटर की दर से उपचारित अवश्य करें। वर्मीकम्पोस्ट को 5 कि.ग्रा. प्रति वर्ग मीटर की दर से बुआई से पहले मृदा में अच्छी तरह मिलाकर खेत तैयार करें। यदि मृदा ठोस हो या उसका भुरभुरापन कम हो, तो उचित मात्रा में बालू या तालाब की गाद/ मृदा को मिलाकर क्यारियां एवं खेत तैयार करें। ऊंची उठी हुई क्यारियां (भूमि की सतह से 15 सें.मी. ऊंची) बनाकर अधिक वर्षा और जलभराव से पौधों का बचाव करें। बुआई के बाद क्यारी को फसल अवशेषों या पतली पारदर्शी पॉलीथीन की चादर से ढक दें। यह क्रिया पलवार बिछाना या मल्चिंग कहलाती है। यह मृदा के तापमान को नियंत्रित करती है और मृदा में नमी को संरक्षित करती है। अंकुर की वृद्धि के लिए बुआई के दो दिन बाद पॉलीथीन की चादर को हटा दें।

पौधशाला की तैयारी

विदेशी सब्जियों के बीज बहुत छोटे एवं संवेदनशील होते हैं, जिन्हें उगाने के लिए पौधशाला की मृदा को उचित प्रकार से भुरभुरा और उपचारित करना चाहिए। इसके लिए खेत की तैयारी में दिए गए निर्देशों का पालन करें। प्रो-ट्रे पौधशाला विधि मृदारहित नर्सरी की विधि है, जिसमें मृदा के स्थान पर नारियल का बुरादा (कोकोपीट), वर्मीकुलाइट और परलाइट के मिश्रण (3:1:1) का प्रयोग किया जाता है। वर्मीकुलाइट और परलाइट के स्थान पर कोकोपीट के साथ वर्मीकम्पोस्ट और बालू के मिश्रण (3:1:1) का प्रयोग किया जा सकता है। इसके द्वारा विदेशी सब्जियों की पौध तैयार करने से समय और बीज की

पाक-चोई

बचत होती है और स्वस्थ पौध प्राप्त होती है। इस विधि द्वारा तैयार पौधशाला कीट-व्याधियों से मुक्त होती है। यह विधि मृदारहित है और छायादार जाली घरों में तैयार की जाती है। इस पौधशाला को दूरस्थ और पहाड़ी क्षेत्रों तक सुगमतापूर्वक पहुंचाया जा सकता है।

पौधशाला में बीज बोने की विधि

बीजजनित रोगों से फसल को बचाने के लिए सूखे बीजों का उपचार या तो कैप्टॉन या थीरम या ब्रैसीकोल 3 ग्राम/ कि.ग्रा. बीज की दर से करना चाहिए। क्यारियों में शीघ्र अंकुरण प्राप्त करने के लिए गोभीवर्गीय सब्जियों जैसे-ब्रोकली, चीनी पत्तागोभी, लाल पत्तागोभी एवं कद्दूवर्गीय सब्जियों जैसे-जुकिनी एवं यूरोपीय खीरा आदि के बीजों को रातभर पानी में भिगोना चाहिए। उपचारित बीजों को पंक्तियों में 2 से 3 सें.मी. की गहराई पर बोयें। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 10 सें.मी. रखें। बीजों को तुरंत मिट्टी और रेत की एक पतली परत के साथ अच्छी तरह से सूखे और छने हुए गोबर के साथ ढक दिया जाना चाहिए। सतह को लकड़ी के लेवलर द्वारा समतल कर देना चाहिए। बुआई के बाद बीजों को मृदा की हल्की परत से ढक कर हजारे से हल्की सिंचाई दें। बीज के जमाव को बढ़ाने के लिए क्यारियों को पारदर्शी पॉलीथीन से 48 घंटे के लिए ढक दें। अंकुरण होने पर पॉलीथीन को हटा दें और हजारे से हल्की सिंचाई देते रहें। 40-45 दिनों में पौधशाला तैयार हो जाती है। रोपाई करने के 2-3 दिनों पहले पौधशाला की सिंचाई न करें। कद्दूवर्गीय सब्जियों की पॉलीबैग पौधशाला तैयार करनी चाहिए।

यदि पौध को एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाना है, तो सर्वप्रथम बीज ट्रे में बीज की बुआई करें। प्रो-ट्रे पौधशाला तैयार करने के लिए बीज ट्रे या किसी अन्य पात्र में बीजों को 2.5 सें.मी. की दूरी पर और 1-2 सें.मी. (बीज के व्यास से 4 गुना) की गहराई पर यू-आकार के फर्रों में बोना चाहिए। जब पौधे में दो पत्तियां निकल आयें तब कोकोपीट मिश्रण से भरे प्रो-ट्रे में प्रत्यारोपित करें। यह क्रिया पौध को बाहरी आघातों के प्रति सहिष्णु बनाती है और कमजोर पौधों की पुनः रोपाई के समय छंटाई भी हो जाती है।

पौधशाला तैयार करने और रोपण का समय

विदेशी सब्जियां ठंडे स्थानों जैसे यूरोपीय देशों की देशज हैं। इसलिए इनकी पौधशाला तैयार करने का उपयुक्त समय मध्य अक्टूबर है, जब तापमान में गिरावट आने लगती है। अरुणाचल प्रदेश के तवांग जैसे-उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में संरक्षित संरचनाओं जैसे-पॉलीटनल, पॉलीहाउस, ग्रीनहाउस आदि में अधिकतर विदेशी सब्जियां वर्षभर उगाई जा सकती हैं। जब सर्दियों के महीनों (अक्टूबर से मार्च) के दौरान रात का तापमान शून्य से कम हो जाता है तब स्विस चार्ड, रूबर्ब चार्ड, लेट्यूस, पाक-चोई, सेलेरी, केल आदि जैसी पत्तेदार सब्जियां और जड़ वाली सब्जियां जैसे यूरोपीयन गाजर और रुतबागा सबसे अनुकूल हैं। इन स्थानों पर सर्दियों की फसल के लिए पौधशाला की तैयारी अक्टूबर में और गर्मियों की फसल के लिए अप्रैल में करनी चाहिए। अक्टूबर में बुआई के लिए नर्सरी की तैयारी सितंबर में शुरू की जानी

सब्जियों का चयन

बाजार मांग और मौसम के अनुसार सब्जियों का चयन करना इनके सफल उत्पादन के लिए आवश्यक है। सर्दियों (अक्टूबर से मार्च) में विशेष रूप से पत्तेदार जैसे पाक-चोई, लेट्यूस, सेलेरी, केल, स्विस चार्ड, रूबर्ब चार्ड, पारस्ले इत्यादि; जड़ वाली जैसे-रुतबग्गा, यूरोपीयन गाजर, पार्सनिप इत्यादि और गोभीवर्गीय जैसे-लाल पत्तागोभी, चाइनीज पत्तागोभी, ब्रोकली, ब्रूसेल्स स्प्राउट इत्यादि की खेती की जा सकती है। ग्रीष्मकाल में पत्तेदार एवं जड़ वाली सब्जियों के साथ-साथ चेरी टमाटर, बेबीकॉर्न, जूकिनी, विभिन्न रंगों वाली शिमला मिर्च, यूरोपीयन खीरे की खेती करना लाभदायक है। उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों में पाक-चोई, सेलेरी, ब्रोकली, लाल पत्तागोभी, चाइनीज पत्तागोभी गर्मियों के मौसम (अप्रैल से सितंबर) में खुले मैदान में उगाई जा सकती हैं। भारी वर्षा के समय इष्टतम उत्पादन सुनिश्चित करने के लिए इन्हें खुले खेतों में पॉलीटनल या लो टनल की स्थापना द्वारा संरक्षित किया जा सकता है।

कीट और रोग प्रबंधन

ग्रीनहाउस में कीटों और रोगों की कम आशंका होती है। ये संरक्षित संरचनाएं हैं, जो कीटों और रोगजनकों को पौधों के संपर्क में आसानी से नहीं आने देती हैं। कुछ मृदा और बीजजनित रोगों और कीटों की रोकथाम मृदा तथा बीज उपचार द्वारा की जा सकती है। आर्द्र गलन (डैम्पिग ऑफ), तना गलन (स्टॉक रॉट), काला गलन (ब्लैक रॉट) और क्लब रॉट पौधशाला में लगने वाले मुख्य रोग हैं। पत्तेदार या सलाद वाली सब्जियों के मुख्य रोग मृदु विगलन (सॉफ्ट रॉट), मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्ड्यू) और मोजेक हैं। इन रोगों की रोकथाम के लिए बाविस्टीन या डाइथेन एम-45 की 1.5-2 ग्राम/लीटर मात्रा का छिड़काव करें। पत्ती-हॉपर (पर्ण फुदका), वयस्क बीटल (भृंग), थ्रिप्स (लता कीट), फ्रूट फ्लाई (फल मक्खी), स्केल इन्सेक्ट (शल्क कीट), मिलीबग आदि से फसलों की सुरक्षा के लिए नीम के बीजों का अर्क (एनएकेई 500 से 2000 मि.ली./10 लीटर) का एक रोगनिरोधी छिड़काव शाम के समय किया जा सकता है।

चाहिए। कद्दूवर्गीय सब्जियां जैसे-जुकिनी एवं यूरोपीयन खीरे की पॉलीबैग पौधशाला मध्य मार्च से शुरू करनी चाहिए। यद्यपि यूरोपीय खीरा पार्थेनोकार्पिक (अनिषेक फलन) है, उन्हें परागण की आवश्यकता नहीं होती है, फिर भी इन्हें सर्दियों के प्राकृतिक रूप से हवादार ग्रीनहाउस में उगाया नहीं जा सकता। उच्च ऊंचाई वाले क्षेत्रों में इसकी खेती का इष्टतम समय गर्मी का मौसम (अप्रैल से सितंबर) है।

पोषक तत्व प्रबंधन

फार्म या ग्रीनहाउस जैविक अवशेषों जैसे-खरपतवार, सब्जियों के पत्ते एवं डंठल आदि से तैयार खाद या वर्मीकम्पोस्ट या गोबर की खाद जैसे जैविक खादों का उपयोग न

लाल पत्तागोभी

लेट्यूस (ग्रीन)

सारणी 1. विदेशी सब्जियों के लिए रोपण दूरी

विदेशी सब्जी का नाम	पंक्ति से पंक्ति×पौध से पौध(सें.मी.×सें.मी.)		
सर्दियों के मौसम के लिए उपयुक्त			
जड़ और पत्तेदार सब्जियां	रोपण दूरी	गोभीवर्गीय सब्जियां	रोपण दूरी
पार्सले	40×30	लाल पत्तागोभी	45×30
लीक	30×15	चाइनीज पत्तागोभी	45×20
स्विस चार्ड, रूबर्ब चार्ड,	45×30	ब्रोकली	45×45
केल	50×50	ब्रूसेल्स स्प्राउट	60×0
लेट्यूस	20×5		
पाक-चोई	20×10		
सेलेरी	45×30		
एंडाइव	30×25		
पार्सनिप	30×15		
गर्मियों के मौसम के लिए उपयुक्त			
यूरोपीयन खीरा	पंक्ति से पंक्ति 45 सें.मी. और क्यारी से क्यारी 150 सें.मी. (दो पंक्ति प्रणाली)		
जुकिनी	100×50 (उच्च तापमान पर अधिक रोग लगते हैं)		
बेबीकॉर्न	45×15 (एग्रो शेडनेट वाले वर्षा आश्रयों में उगा सकते हैं)		
विभिन्न रंगों वाली शिमला मिर्च	75×45 (घने रोपण में फलों की संख्या कम हो जाती है)		
चेरी टमाटर	90×60 (घने रोपण से बचें, युग्मित पंक्ति प्रणाली सबसे अच्छी है)		

सारणी 2. विदेशी सब्जियों की सिंचाई के लिए क्रांतिक अवस्थाएं

विदेशी सब्जी	क्रांतिक अवस्थाएं
लाल पत्तागोभी	संपुट (सर) की वृद्धि एवं विकास की अवस्था
ब्रोकली	फूल की वृद्धि एवं विकास की अवस्था
यूरोपीयन खीरा	पुष्पण व फल विकास की अवस्था
पत्तेदार सब्जियां	सम्पूर्ण वृद्धिकाल
चेरी टमाटर, विभिन्न रंगों वाली शिमला मिर्च	पुष्पण व फल विकास की अवस्था और प्रत्येक कटाई के बाद
जुकिनी	कोंपल विकास, पुष्पण व फल विकास की अवस्था
बेबीकॉर्न	बुआई के 15 से 20 दिनों बाद, घुटनों से ऊंची अवस्था एवं पुष्पण से पहले

केवल रासायनिक उर्वरकों का न्यूनतम उपयोग सुनिश्चित करता है, बल्कि उपलब्ध संसाधनों के एकीकरण और विवेकपूर्ण उपयोग को भी निर्धारित करता है। भूमि की तैयारी के समय प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र में 2 से 5 कि.ग्रा. अच्छी तरह से विघटित जैविक खाद का एक प्रयोग सूक्ष्म और गौण पोषक तत्वों की आपूर्ति करता है। इसके अतिरिक्त चेरी टमाटर, यूरोपीय खीरा

सारणी 3. जड़ वाली सब्जियों की खुदाई की उपयुक्त अवस्था

सब्जी	खुदाई के लिए उपयुक्त अवस्था
पर्सनिप	ऊपरी पत्ते पीले पड़ने की अवस्था या जड़ की मोटाई 4.0 से 5.0 सें.मी. हो
यूरोपीयन गाजर	जड़ की मोटाई 2.5 से 3.0 सें.मी. हो

जैसी फल वाली सब्जियों के लिए फलों के बनते समय एनपीके (19:19:19) उर्वरक का 5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से दो से तीन छिड़काव करना चाहिए। यूरोपीय खीरे में रोपण के 15 दिनों के बाद प्रत्येक तीन दिनों में एक बार एनपीके (19:19:19)2 से 4 ग्राम/फर्टिगेशन (ड्रिप पंक्तियों के माध्यम से सिंचाई के पानी के साथ उर्वरकों की आपूर्ति) 90 दिनों तक करें। पत्तेदार सब्जियों की प्रत्येक कटाई के बाद इष्टतम पुन: वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए अच्छी तरह से विघटित जैविक खाद 4 से 5 कि.ग्रा. प्रति वर्ग मीटर की दर से बिखेर कर मृदा में मिलानी चाहिए।

जल प्रबंधन

पौधशाला तैयार करने और खेत के लिए भूमि की तैयारी से पहले सिंचाई आवश्यक है। ग्रीनहाउस में पानी को फसल की जरूरत के अनुसार हजारे या नालियों के माध्यम से दिया जाता है। पानी के विवेकपूर्ण और इष्टतम उपयोग के लिए टपक सिंचाई पंक्तियों या ओवरहेड स्प्रिंक्लर (फुहारा) लगाए जा सकते हैं। अत्यधिक सिंचाई से प्राकृतिक रूप से हवादार ग्रीनहाउस के अंदर नम स्थिति पैदा होती है। इससे कीट-व्याधियों का प्रकोप हो सकता है। सब्जियों की फसलों में सिंचाई के लिए कुछ क्रांतिक अवस्थाएं सारणी-2 में दर्शाई गई हैं।

फसल कटाई

पत्तेदार सब्जी की कटाई रोपाई के 45 से 50 दिनों में कर लेनी चाहिए। अन्यथा पत्ती के रेशों की परिपक्वता के कारण पत्तियों की गुणवत्ता में तेजी से गिरावट आती है। पूर्ण रूप से विकसित निचली पत्तियों को मृदा की सतह से 5 सें.मी. छोड़कर इस तरह से काटा जाना चाहिए कि पौधे की जड़ों को हानि न पहुंचे। सब्जियों की कटाई निश्चित अंतराल पर सुबह के समय करें। पत्तेदार सब्जियों की एक से अधिक बार कटाई (मल्टीकट) लेने व पौधों की पुन: वृद्धि के लिए अच्छी तरह से विघटित जैविक खाद की 4 से 5 कि.ग्रा. मात्रा को प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र की दर से प्रत्येक कटाई के बाद मृदा में मिलाएं। सब्जियों की तुड़ाई/कटाई कीटनाशकों के छिड़काव के तुरंत बाद न करें। फसल कटाई के लिए पैकेट पर दिए हुए पूर्व फसल अंतराल (कीटनाशक छिड़काव और फसल कटाई के मध्य का निश्चित समय) का पालन करें। ब्रोकली की कटाई संपुट की कलियों के पुष्पण से ठीक पहले जब कलियां पुष्ट और चुस्त हों, तब करनी चाहिए। चेरी टमाटर और शिमला मिर्च का चयन लंबी दूरी के परिवहन के लिए फलों के रंग बदलने (हल्के हरे से हल्के लाल) की अवस्था में अन्यथा पूरी तरह से लाल रंग की अवस्था में करना चाहिए। यूरोपीय खीरे का चयन फल बनने के 15 से 18 दिनों बाद करना चाहिए। जुकिनी का चयन वैसे तो फल बनने के बाद किसी भी अवस्था पर किया जा सकता है। तरुण और कोमल अवस्था या जब फलों की लंबाई 15 सें.मी. के आसपास हो, तो चयन का उपयुक्त समय है। आमतौर पर बेबीकॉर्न की तुड़ाई रेशम निकलने की अवस्था में (बुआई के लगभग 50-60 दिनों बाद) की जाती है। ■

स्विस चार्ड (फोर्ड हॉक जायंट)

सारणी 4. ग्रीनहाउस में विदेशी सब्जियों के उत्पादन के लिए सावधानियां

क्या करें	क्या न करें
धूप के दिनों में गर्म हो जाने पर ग्रीनहाउस के दरवाजे व खिड़कियां खोल दें	अधिक रासायनिक कीटनाशों का प्रयोग न करें और पानी को ठहरने न दें
ज्यादा ठंड होने पर पॉलीथीन टनल बनाकर पौधों को सुरक्षित रखें	ऊंची-नीची, खड़ी ढलान वाले और छायादार स्थानों पर ग्रीनहाउस न बनाएं
फ्रेम को चिकना बनाएं ताकि पॉलीथीन न फटे।	ग्रीनहाउस की छत को बहुत ऊंचा न बनाएं।
प्रकाश संश्लेषण में सुधार के लिए, ग्रीनहाउस के पैनल (छत) से काई के जमाव की नियमित सफाई होनी चाहिए	तेज धूप वाले दिनों में खिड़की बंद न रखें
फ्यूमिगेशन या सोलराइजेशन के साथ बीजों की नियमित निराई, गुड़ाई और उपचार सुनिश्चित करें	ग्रीनहाउस की छत पर धूल, काई व बर्फ आदि को जमा न होने दें
मृदा में आवश्यक पोषक तत्वों का आंकलन और पुन: पूर्ति के लिए मृदा की उर्वरता का नियमित परीक्षण करें	ठंड के महीनों के दौरान पर-परागित फसलें न उगाएं (परागण मधुमक्खियों, हाथ परागण जैसे परागण का अभ्यास किया जाना चाहिए।)

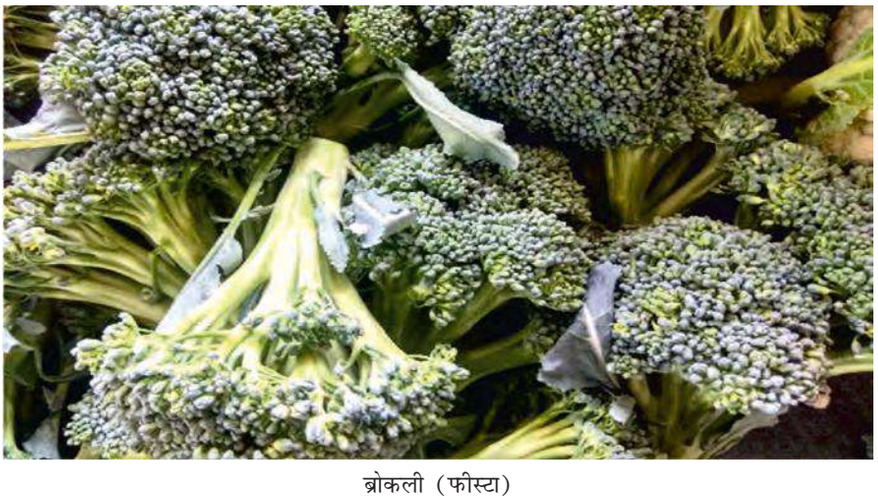

ब्रोकली (फीस्टा)

विदेशियों को भा रहे हैं भारतीय फल और फूल

भारत, कोविड-19 महामारी से उत्पन्न लॉजिस्टिक चुनौतियों के बावजूद इस मौसम में देश में पैदा हुए फलों और फूलों के निर्यात को बढ़ावा देने में सक्षम रहा है। देश में पैदा हो रहे फलों और फूलों की मांग दुनियाभर में बढ़ रही है। अपने विशेष स्वाद और पोषक गुणों से भरपूर भारतीय फल विदेशों में बड़ी मात्रा में निर्यात किए जा रहे हैं और इनसे देश को विदेशी मुद्रा भी अर्जित हो रही है। बागवानी फसलों के निर्यात को बढ़ावा देने की दिशा में कदम बढ़ाते हुए कश्मीर घाटी से मिश्री किस्म की स्वादिष्ट चेरी का पहला व्यावसायिक लदान (शिपमेंट) श्रीनगर से दुबई के लिए किया गया है। मिश्री किस्म की यह चेरी न केवल स्वादिष्ट होती है, बल्कि इसमें स्वास्थ्य लाभ के साथ-साथ विटामिन, खनिज और वानस्पतिक यौगिक भी भरपूर मात्रा में होते हैं। जम्मू-कश्मीर में देश की व्यावसायिक किस्मों की चेरी के कुल उत्पादन का 95 प्रतिशत से अधिक उत्पादन होता है। यहां चेरी की चार किस्मों-डबल, मखमली, मिश्री और इटली का मुख्य रूप से उत्पादन होता है। लदान से पहले एपीडा से पंजीकृत निर्यातकों द्वारा चेरी की तुड़ाई, सफाई और पैकिंग की गई, जबकि तकनीकी जानकारी कश्मीर के शेर-ए-कश्मीर कृषि विज्ञान और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय द्वारा उपलब्ध कराई गई है। भाकृअनुप-राष्ट्रीय अंगूर अनुसंधान केंद्र, पुणे स्थित एक राष्ट्रीय रेफरल प्रयोगशाला है। इस केन्द्र ने लदान में खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए सहायता प्रदान की। इससे विशेष रूप से मध्य-पूर्व देशों में चेरी के ब्रांड सृजन में मदद मिलेगी।

अंगूर और चेरी का बढ़ता निर्यात

चमेली के फूल अमेरिका और दुबई भेजे गए

विदेश में रहने वाले लोग भी अब भारतीय फूलों की खूशबू से रूबरू हो सकेंगे। विदेशियों के घरों तक देश में पैदा हो रहे ताजे फूलों की आपूर्ति मिलती रहे, इसे सुनिश्चित करने के लिए जीआई (भौगोलिक संकेतक) प्रमाणित चमेली की मदुरै माली किस्म और अन्य पारंपरिक फूलों की किस्मों जैसे-बटन गुलाब, लिली और गेंदा की खेप तमिलनाडु से अमेरिका और दुबई को निर्यात की गई है। आधुनिक पैकेजिंग प्रौद्योगिकी को अपनाने और फूलों के निर्यात को बढ़ाने के लिए कोयंबटूर स्थित तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय के पुष्प उत्पादन विभाग के प्रोफेसरों द्वारा इसमें सहयोग किया गया है। निर्यातकों द्वारा गुणवत्तापूर्ण फूलों की खेती के लिए किसानों के साथ सीधा संपर्क किया गया। इस पहल से रोजगार सृजन भी हुआ। वर्ष 2020-2021 के दौरान, 66.28 करोड़ रुपये मूल्य के ताजे फूल उत्पादित किए गए। चमेली के फूल (चमेली और अन्य पारंपरिक फूल भी) अमेरिका, दुबई, सिंगापुर आदि देशों को निर्यात किए गए। चमेली *(जैस्मीनम ऑफिसिनेल)* दुनियाभर में पाए जाने वाले सबसे लोकप्रिय फूलों में से एक है। चमेली की खुशबू मदुरै के मीनाक्षी मंदिर के वैभव का पर्याय है। मदुरै, अपने पड़ोस में उगाई जाने वाली मल्लिगाई के लिए एक प्रमुख बाजार के रूप में उभरा है और भारत की 'चमेली राजधानी' के रूप में में विकसित हुआ है। ■

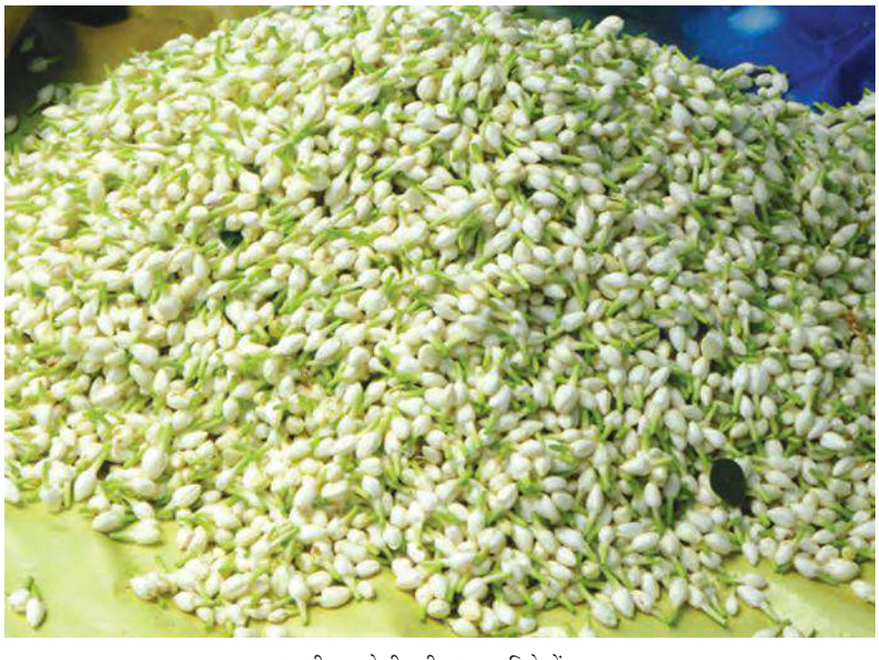

भारतीय चमेली की खुशबू विदेशों तक

प्रसंस्करण

अंगूर से किशमिश उत्पादन

गीतिका सिंह

भारत में अंगूर की खेती मुख्य रूप से महाराष्ट्र और कर्नाटक के ऊष्णकटिबंधीय इलाकों तक सीमित है। ये राज्य कुल अंगूर उत्पादन में लगभग 95 प्रतिशत का योगदान करते हैं। देश में अंगूर का उत्पादन मुख्य रूप से ताजे खाने के उद्देश्य से किया जाता है। कुल उत्पादन का लगभग 28 प्रतिशत ही किशमिश में परिवर्तित किया जाता है। वर्ष 2018-19 के दौरान विभिन्न देशों में 110 हजार टन अंगूर का निर्यात किया गया और 334.79 मिलियन अमेरिकी डॉलर प्राप्त किए गए।

अंगूर की खेती में अक्टूबर-नवंबर, 2019 के दौरान भारी बारिश के कारण, फल की कलियां तंतु में बदल गई और डाउनी मिल्ड्यू के प्रकोप को इसमें देखा गया था। इससे महाराष्ट्र में लगभग 20 प्रतिशत अंगूर की फसल समाप्त हो गई थी।

उस वक्त कटाई सामान्य रूप से की गई थी, लेकिन कोविड 19 के प्रकोप के कारण निर्यात प्रक्रिया बुरी तरह प्रभावित हुई और उसी समय विभिन्न बाजारों में आंतरिक अंगूर की आपूर्ति और मांग में भी तेजी से गिरावट आई। फसल की कटाई, व्यापारियों की अनिच्छा, फलों के बाजारों को बंद करने और अंगूर की खरीद में उपभोक्ताओं की कम रुचि के कारण अंगूर का व्यापार प्रभावित हुआ। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार, अप्रैल 2020 के पहले सप्ताह तक भारत से लगभग 85 हजार टन ताजे खाने योग्य अंगूरों का निर्यात किया गया था। उसी समय 12 लाख टन से अधिक ताजे अंगूर बागों में थे और कटाई की प्रतीक्षा कर रहे थे।

*सीजीसी, कृषि विभाग (फसल भौतिकी) जांजरी, मोहाली

महाराष्ट्र के नासिक जिले में अंगूर केवल ताजे खाने के उद्देश्य के लिए उगाए जाते हैं। कुछ अंगूर उत्पादक, जो निर्यात और घरेलू आपूर्ति के लिए अंगूर का उत्पादन करते हैं, उन्हें भी इसी स्थिति का सामना करना पड़ा था।

किशमिश बनाने की प्रक्रिया

महाराष्ट्र के सांगली और सोलापुर जिलों और इसके नजदीक पुरा और कर्नाटक के बागलकोट जिलों में मुख्य रूप से किशमिश बनाने के लिए अंगूर उगाया जाता है। भारत में, किशमिश बनाने की ऑस्ट्रेलियाई विधि प्रचलित है, जहां अंगूर के गुच्छों को शेड के अंदर रैक में सुखाने से पहले एथिल ओलियट और पोटेशियम कार्बोनेट के साथ उपचारित किया जाता है। विश्व में अंगूर के कई हिस्सों को प्राकृतिक परिस्थितियों में सुखाया जाता है।

नासिक में किशमिश उत्पादन

नासिक क्षेत्र ताजे खाने योग्य अंगूर उत्पादन के लिए जाना जाता है। इस दौर में भाकृअनुप ने किसानों को अंगूर के प्रसंस्करण से किशमिश उत्पादन करने की सलाह दी।

नासिक जिला किशमिश में शामिल नहीं है, इसलिए इस जिले में आवश्यक अवसंरचना (अंगूर सुखाने वाले शेड) उपलब्ध नहीं हैं। ऐसे में किसानों को दो पंक्तियों के भीतर

वाइन अंगूर

अंगूर वृक्षारोपण

अंगूर बेल

अंगूर के फूल

डीओवी और अंगूर सुखाने की सलाह दी गई थी। व्यापक प्रचार के लिए, एक पीडीएफ कॉपी में अंगूर सुखाने की प्रक्रिया में निहित गतिविधियां भी व्हाट्सएप समूहों के बीच प्रसारित की गईं। कई अंगूर उत्पादकों ने अंगूर और किशमिश बनाने के लिए भाकृअनुप के सुझावों को अपनाया। एक अनुमान के अनुसार लगभग 4 लाख टन अंगूरों को किशमिश में बदल दिया गया और लगभग 80 हजार टन किशमिश का उत्पादन किया गया।

किशमिश व्यापार

घरेलू बाजार में आपूर्ति के अलावा, कुछ समूह किशमिश निर्यात भी कर करते हैं। मूल्य प्राप्ति में बहुत भिन्नता पाई जाती है, जो सीधे तौर पर किशमिश की गुणवत्ता और विभिन्न प्रयोजनों के लिए इसके आगे उपयोग से संबंधित है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में हमारी स्थिति अच्छी नहीं है और भारत निर्यात की तुलना में अधिक मात्रा में आयात कर रहा है। हम संभावित बाजारों की पहचान कर सकते हैं, जहां से हम अपने उत्पाद का अच्छा बाजार मूल्य पा सकते हैं। इस वर्ष लगभग 80 हजार टन किशमिश अतिरिक्त रूप से उत्पादित की गई। भारत में किशमिश का बहुत बड़ा घरेलू बाजार है लेकिन हमें इसके लिए बुनियादी ढांचे और आपूर्ति श्रृंखला में सुधार करना होगा। घरेलू बाजार से किशमिश की बेहतर वापसी के लिए ई-एनएएम विश्वसनीय मंच के रूप में काम कर सकता है। सरकार काउंटी के भीतर किशमिश के विपणन के लिए एनएचबी जैसी एजेंसियां अंगूर उत्पादकों और प्रोसेसर और अन्य हितधारकों का समर्थन कर सकती हैं। कैबिनेट द्वारा एपीएमसी नियमों में संशोधन से ट्रेडिंग में मानदंडों में आसानी होगी।

पेकमेज अंगूर, शहतूत, अंजीर, सेब और चुकंदर जैसे विभिन्न फलों का उपयोग करके बनाया जाने वाला एक पारंपरिक तुर्की भोजन है। यह एक प्रकार का फलों का रस है, जो विभिन्न फलों जैसे-अंगूर, शहतूत, अंजीर, किशमिश, सेब, और चुकंदर से तैयार होता है। इसका नाम उस फल के नाम पर रखा जाता है, जहां से इसे प्राप्त किया जाता है, यानी अंगूर पेकमेज, शहतूत पेकमेज आदि। यह अपनी पौष्टिक सामग्री के कारण एक स्वास्थ्यप्रद आहार है। रासायनिक संरचना के आधार पर इसे ऊर्जा के मुख्य स्रोत के रूप में उपयोग किया जाता है। पेकमेज में कार्बोहाइड्रेट आमतौर पर प्राकृतिक शर्करा जैसे-ग्लूकोज और फ्रक्टोज के रूप में होते हैं, जो शिशुओं, बच्चों, खिलाड़ियों और सक्रिय श्रमिकों (सिम्सेक एटअल 2005) के लिए पोषक रूप से महत्वपूर्ण हैं। उद्यमी पेकमेज का उत्पादन शुरू कर सकते हैं। यह नए स्वास्थ्य उत्पाद बनाने में किशमिश की खपत और उपयोग के नए द्वार खोलेगा। ■

किशमिश के उत्पाद

किशमिश पेस्ट का उपयोग बेकरी आइटम, जैसे कि ब्रेड, कुकीज, और पेस्ट्री में ढालना विकास को रोकने, शेल्फ जीवन का विस्तार करने और स्वाद बढ़ाने के लिए भी किया जाता है।

किशमिश अल्कोहल पेयः इसका एक मादक पेय के रूप में एक प्राचीन इतिहास है। दरअसल, सूखे अंगूर में पानी को छोड़कर सभी तत्व होते हैं, जो वाइन बनाने के लिए आवश्यक होते हैं। खाल में खमीर होते हैं, जो स्वाभाविक रूप से चीनी को शराब में बदलते हैं। किशमिश के वजन में 2/3 प्राकृतिक चीनी है और तैयार किशमिश का रस किण्वित किया जा सकता है और वाइन तैयार की जा सकती है। किशमिश वाइन के उत्पादन में कटी हुई किशमिश को पानी में भिगोना और वांछित खमीर जोड़ना शामिल है। मदिरा में अम्लता के स्तर को बनाए रखने के लिए एसिड प्रयोग किया जा सकता है। किण्वन के बाद तैयार वाइन शुद्ध होती है।

आलू में तना ऊतक क्षय रोग का प्रबंधन

डी.एल. यादव*, बी.एल. नागर*, प्रताप सिंह* और **प्रतीक जैसानी***

सब्जियों में आलू की फसल एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। आलू एक लोकप्रिय एवं पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व प्रदान करने वाला खाद्य उत्पाद है। आलू की खेती देश के बड़े भूभाग पर की जाती है। हमारे देश में इसकी खेती मैदानी एवं पहाड़ी दोनों ही क्षेत्रों में की जाती है। आलू को सब्जियों का राजा भी कहा जाता है। वर्तमान में इसके उत्पादन में भारत का दूसरा स्थान है। राजस्थान में आलू मुख्यत: कोटा, धौलपुर, भरतपुर, गंगानगर, सिरोही, अलवर, बूंदी, हनुमानगढ़ एवं जालौर में उगाया जाता है। आलू की फसल में कई प्रकार के विषाणुजनित रोग पाये जाते हैं, जैसे-मोजेक, लीफरोल, लिटललीफ आदि, जिनके लक्षणों में पत्तियों का चितकबरापन, छोटा होना, ऊपरी या निचली तरफ मुड़ना इत्यादि प्रमुख हैं। ये रोग इतने उग्र नहीं होते कि फसल की उपज को ज्यादा हानि पहुंचायें। पिछले 5-6 वर्षों में मैदानी क्षेत्रों में आलू में एक नया विषाणु रोग दिखाई दिया है। इस रोग का नाम है तना ऊतक क्षय रोग (स्टेम नेक्रोसिस)। यह रोग 'टोस्पो वायरस' से उत्पन्न होता है।

तना ऊतक क्षय रोग पिछले 7-8 वर्षों से राजस्थान, गुजरात एवं मध्य प्रदेश के क्षेत्रों में बहुतायत से पाया जा रहा है। इस रोग के लक्षण बुआई के 20-25 दिनों के पश्चात् ही दिखाई देने लगते हैं। रोग के लक्षण शुरुआती होने के कारण पौधे के विकास में बाधा उत्पन्न होती है, जिस कारण से आलू में बनने वाले कंदों की संख्या एवं आकार में कमी हो जाती है। इस रोग से 25 से 30 प्रतिशत तक पैदावार में कमी हो जाती है।

रोग प्रबंधन

- इस रोग की रोकथाम के लिए आलू की बुआई अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक करनी चाहिए। इस समय में बुआई करने से रोग की उग्रता कम होती है।
- रोगरोधी किस्मों के प्रयोग से भी इस रोग की रोकथाम की जा सकती है। कुफरी सिन्दूरी, कुफरी आनन्द एवं कुफरी लिमा आदि किस्में तना ऊतक क्षय रोग प्रतिरोधी हैं।
- अनुसंधानों में यह भी पाया गया है कि आलू की खड़ी फसल में बुआई के 21 दिनों बाद फिप्रोनिल 5 एससी नामक दवा (10 लीटर पानी में 15 मि.ली. दवा) या डायफेन्थियुरॉन 50 डब्ल्यूपी (10 लीटर पानी में 10 ग्राम दवा) का दस दिनों के अंतराल पर घोल बनाकर छिड़काव करने से तना ऊतक क्षय रोग की उग्रता का प्रबंधन किया जा सकता है।

रोगरोधी किस्म 'कुफरी सिन्दूरी'

आलू में तना ऊतक क्षय रोग का प्रकोप

संक्रमित फसल

तना ऊतक क्षय रोग

रोगवाहक

यह रोग पर्णजीवी (थ्रिप्स) द्वारा फैलता है।

रोग की पहचान

रोग के प्रारम्भिक लक्षण बुआई के 20-25 दिनों बाद तने एवं पर्णवृन्त पर भूरे/काले रंग के धब्बों के रूप में प्रकट होते हैं, जो धीरे-धीरे लंबाई में फैलते हैं। बाद में पत्तियों पर भी छोटे-छोटे काले धब्बे दिखाई देते हैं। तना उतक क्षय रोग के कारण तने एवं पर्णवृन्त काले पड़ने लगते हैं। रोगग्रस्त स्थान से तना कठोर पड़ जाता है और थोड़ा सा जोर लगाने से तना आसानी से टूट जाता है। डालियां मुरझाने लगती हैं और पौधे सूखने लगते हैं।

*कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, अनुसंधान निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

विधि

गेंदा खेती की तकनीक

जगदीश कुमार*, केशव खुंटिया*, सचिन सिन्हा* और **वेद प्रकाश***

भारत में पुष्प व्यवसाय में गेंदा का महत्वपूर्ण स्थान है। इसका धार्मिक तथा सामाजिक अवसरों पर बड़े पैमाने पर इस्तेमाल होता है। गेंदा फूल का पूजा-अर्चना के अलावा शादी-ब्याह, जन्मदिन, सरकारी एवं निजी संस्थानों में आयोजित विभिन्न समारोहों के अवसर पर पंडाल, मंडपद्वार तथा गाड़ी, सेज आदि सजाने एवं अतिथियों के स्वागतार्थ माला, बुके, फूलदान आदि में भी प्रयोग किया जाता है।

गेंदा के फूल का इस्तेमाल मुर्गी के आहार के रूप में भी आजकल बड़े पैमाने पर हो रहा है। इसके प्रयोग से मुर्गी के अंडे की जर्दी का रंग पीला हो जाता है। इससे अण्डे की गुणवत्ता तो बढ़ती ही है, साथ ही आकर्षण भी बढ़ जाता है।

खेती के लिए मृदा

गेंदा खेती के लिए दोमट, मटियार दोमट एवं बलुआर दोमट मृदा सर्वोत्तम होती हैं, जिनमें उचित जल निकास की व्यवस्था हो।

मृदा तैयारी

मृदा को समतल करने के बाद एक बार मृदा पलटने वाले हल से तथा 2-3 बार देसी हल या कल्टीवेटर से जुताई करके एवं पाटा चलाकर, मृदा को भुरभुरा बनाने एवं कंकड़-पत्थर आदि को चुनकर बाहर निकाल दें। सुविधानुसार उचित आकार की क्यारियां बना लें।

खाद एवं उर्वरक

गेंदे की अच्छी उपज के लिए खेत की तैयारी से पहले 200 क्विंटल कम्पोस्ट प्रति हैक्टर की दर से मृदा में मिला दें। इसके बाद 120-160 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60-80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 60-80 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग प्रति हैक्टर की दर से करें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा एवं फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा खेत की अन्तिम जुताई के समय मृदा में मिला दें। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा पौध रोपण के 30-40 दिनों के अन्दर प्रयोग करें।

प्रसारण

गेंदा का प्रसारण बीज एवं कटिंग दोनों

*राजमोहिनी देवी कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र, अम्बिकापुर-497001

गेंदा की व्यावसायिक किस्में

गेंदा के फूलों की अधिक उपज लेने के लिए परंपरागत किस्मों की जगह उन्नत किस्में बोनी चाहिए। गेंदा की कुछ प्रमुख उन्नत किस्में निम्न हैं:

अफ्रीकन गेंदा

इसके पौधे अनेक शाखाओं से युक्त लगभग 1 मीटर तक ऊंचे होते हैं। फूल गोलाकार, बहुगुणी पंखुड़ियों वाले तथा पीले व नारंगी रंग के होते हैं। बड़े आकार के फूलों का व्यास 7-8 सें.मी. होता है। इसमें कुछ बौनी किस्में भी होती हैं, जिनकी ऊंचाई सामान्यत: 20 सें.मी. तक होती है। अफ्रीकन गेंदा के अंतर्गत व्यावसायिक दृष्टिकोण से उगाये जाने वाले प्रभेद-पूसा नारंगी, पूसा वसन्त, अफ्रीकन येलो इत्यादि हैं।

फ्रांसिसी गेंदा

इस प्रजाति की ऊंचाई लगभग 25-30 सें.मी. तक होती है। इसमें अधिक शाखाएं नहीं होती हैं किन्तु इसमें इतने अधिक पुष्प आते हैं कि पूरा का पूरा पौधा ही पुष्पों से ढक जाता है। इस प्रजाति की कुछ उन्नत किस्में रेड ब्रोकेट, कपिड येलो, बोलेरो, बटन स्काच इत्यादि हैं।

गेंदा की आकर्षक बढ़वार

औषधीय गुण

औषधीय गुणों के कारण गेंदा का खास महत्व है। गेंदा फूल के औषधीय गुण निम्नलिखित हैं:

- कान दर्द में गेंदा की हरी पत्ती का रस कान में डालने पर दर्द दूर हो जाता है। खुजली, दिनाय तथा फोड़ा में हरी पत्ती का रस लगाने पर यह रोगाणुरोधी का काम करती है। अपरस के रोग में हरी पत्ती का रस लगाने से लाभ होता है। अन्दरूनी चोट या मोच में गेंदा की हरी पत्ती के रस से मालिश करने पर लाभ होता है।
- साधारण कटने पर पत्तियों को मसलकर लगाने से खून का बहना बन्द हो जाता है।
- फूलों का अर्क निकालकर सेवन करने से खून शुद्ध होता है।
- ताजे फूलों का रस खूनी बवासीर के लिए भी बहुत उपयोगी होता है।

गेंदा खेत का दृश्य

विधियों से होता है। इसके लिए 300-400 ग्राम बीज प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। इसे 500 वर्ग मीटर की बीज शैय्या में तैयार किया जाता है। बीज शैय्या में बीज की गहराई 1 सें.मी. से अधिक नहीं होनी चाहिए। जब कटिंग द्वारा गेंदा का प्रसारण किया जाता है तक उसमें ध्यान रखना चाहिए कि हमेशा कटिंग नये स्वस्थ पौधे से लें। इसमें मात्र 1-2 फूल खिले हों और कटिंग का आकार 4 इंच (10 सें.मी.) लंबा होना चाहिए। इस कटिंग पर रूटेक्स लगाकर बालू से भरी ट्रे में लगाना चाहिए। 20-22 दिनों बाद इसका खेत में रोपण करना चाहिए। गेंदा फूल की रोपाई खरीफ, रबी, जायद तीनों सीजन में बाजार की मांग के अनुसार की जाती है। इसे लगाने का उपयुक्त समय सितम्बर-अक्टूबर है। विभिन्न मौसमों में अलग-अलग दूरियों पर गेंदा लगाया जाता है, जो निम्न है:

- खरीफ (जून से जुलाई: 60 × 45 सें.मी.
- रबी (सितम्बर-अक्टूबर): 45 × 45 सें.मी.
- जायद (फरवरी-मार्च): 45 × 30 सें.मी.

सिंचाई

खेत की नमी को देखते हुए 5-10 दिनों के अंतराल पर गेंदा में सिंचाई करनी चाहिए। यदि वर्षा हो जाये, तो सिंचाई नहीं करनी चाहिए।

गेंदे की मनोहारी मालाएं

पिंचिंग

रोपाई के 30-40 दिनों के अन्दर पौधे की मुख्य शाकीय कली को तोड़ देना चाहिए। इस क्रिया से यद्यपि फूल थोड़ी देर से आयेंगे, परन्तु इससे प्रति पौधा फूल की संख्या एवं उपज में वृद्धि होती है। निराई-गुड़ाई लगभग 15-20 दिनों पर आवश्यकतानुसार करनी चाहिए। इससे मृदा में हवा का संचार ठीक तरह से होता है एवं वांछित खरपतवार नष्ट हो जाते हैं। रोपाई के 60 से 70 दिनों पर गेंदा में फूल आता है, जो 90 से 100 दिनों तक आते रहते हैं। अत: फूल की तुड़ाई साधारणत: सायंकाल में की जाती है। फूल को थोड़ा डंठल के साथ तोड़ना श्रेयस्कर होता है। फूल के कार्टन इमें चारों तरफ एवं नीचे अखबार फैलाकर रखने चाहिए एवं ऊपर से फिर अखबार से ढक कर कार्टन बन्द करना चाहिए।

कीट और रोग प्रबंधन

लीफ हॉपर, रेड स्पाइडर आदि इसे काफी नुकसान पहुंचाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए मैलाथियान 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करें।

गेंदा में मोजेक, चूर्णी फफूंद एवं फुटरॉट मुख्य रूप से लगता है। मोजेक लगे पौधे को उखाड़कर मृदा में दबा दें एवं पौधों पर कीटनाशक दवा का छिड़काव करें, जिससे मोजेक के विषाणु स्थानान्तरित करने वाले कीट का नियंत्रण हो और इसका विस्तार दूसरे पौधे में न हो। चूर्णी फफूंद के नियंत्रण के लिए 0.2 प्रतिशत गंधक का छिड़काव करें। फुटरॉट के नियंत्रण के लिए इंडोफिल एम-45 0.25 प्रतिशत का 2-3 बार छिड़काव करें।

उपज

80-100 क्विंटल फूल/हैक्टर।

टमाटर में म्लानि रोग की पहचान तथा बचाव

राम निवास*, दीपक मौर्या, अंकित कुमार पाण्डेय***** और **सम्पूर्णानंद सिंह******

आज के दौर में भारत में लगभग 100 तरह की सब्जियों की खेती मैदानी भागों से लेकर पहाड़ी इलाकों तक में सफलतापूर्वक की जा रही है। इनमें 60 ऐसी सब्जियां हैं, जिनकी खेती व्यावसायिक तौर पर लगभग 64 लाख हैक्टर क्षेत्रफल में करके लगभग 940 लाख टन सब्जियों का उत्पादन किया जा रहा है। इनमें से टमाटर की फसल वर्षभर ली जा सकती है। किसानों के लिए टमाटर की फसल आय का भी अच्छा जरिया है। इसकी फसल पर कीटों के साथ-साथ कई तरह के रोगों का भी हमला होता है। इसके लिए किसानों को सजग रहकर टमाटर फसल की देखभाल करनी पड़ती है।

टमाटर, प्राचीन समय से ही बहुत महत्वपूर्ण सब्जियों में से है। इसका उपयोग मुख्यत: सब्जी तथा सलाद के रूप में किया जाता रहा है। आज के समय में टमाटर की खेती करना बहुत ही कठिन हो गया है। इसमें विभिन्न प्रकार के रोग तथा कीट लगने लगे हैं। इससे पूरी की पूरी फसल नष्ट हो जाती है। इन्हीं रोगों में से एक महत्वपूर्ण रोग का उल्लेख इस लेख में किया गया है, इन जानकारियों से किसान भाई लाभ उठाकर तथा

*पौध रोग विज्ञान विभाग; **सब्जी विज्ञान विभाग; ***,****फल विज्ञान विभाग, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर-813210 (बिहार)

नर्सरी अवस्था में म्लानि रोग के लक्षण

अपनी फसल को इस प्रकार के मृदाजनित रोगों से बचा सकते हैं।

म्लानि रोग के लक्षण

टमाटर रोग के दो मुख्य कारक हैं, लेकिन इनके द्वारा उत्पन्न लक्षणों में ज्यादा विभिन्नताएं नहीं हैं। इस रोग के लक्षण प्रारंभिक अवस्था में पहले पत्तियों पर और उसके बाद पूरे पौधे में दिखने लगते हैं। पूरा पौधा धीरे-धीरे संक्रमित हो जाता है। इसके साथ ही संवहनी बंडल भूरे रंग का हो जाता है। उस पौधे के संवहनी बंडल में जीवाणुओं द्वारा एक्सोपॉलीसैकेराइड तथा कवकों द्वारा अपना स्पोर भर दिया जाता है। इसके कारण पौधे में पानी तथा भोजन का आदान-प्रदान रुक जाता है और पौधा मरने लगता है।

जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न लक्षणों की पहचान करने के लिए संक्रमित पौधे का तना लेकर उसको छोटे-छोटे टुकटों में काटकर पानी में डाल दें। थोड़ी देर बाद देखेंगे कि उस पानी का रंग सफेद दूधिया जैसा हो गया है। इससे यह पता चलता है कि इस रोग के जीवाणु पौधे के जाइलम में उपस्थित हैं।

यदि टमाटर का पौधा दिन में मुरझा जाये तथा रात में फिर हरा-भरा हो जाये, तो इससे यह पता चलता है कि जीवाणु म्लानि रोग लगा है। इसमें पौधा कई दिनों के बाद मरता है, लेकिन यदि यही म्लानि कवक के कारण हो, तो पौधा 2-3 दिनों में ही सूख जाता है।

यह रोग बलुई मृदा में ज्यादा लगता है। टमाटर के खेत में कई दिनों तक यदि पानी भरा रह जाता है, तो इसके कारण भी यह रोग लग जाता है।

म्लानि रोग कारक

टमाटर में लगने वाले म्लानि रोग के दो कारक हैं; जीवाणु तथा कवक। जीवाणु में *राल्स्टोनिआ सोलेनेसियरम* तथा कवक में *फ्यूजेरियम* और *वर्टिसिलियम* हैं।

राल्स्टोनिआ सोलेनेसियरम एक ग्राम नेगेटिव, छड़ीनुमा जीवाणु है। यह मृदा में अधिक समय तक जीवित रह सकता है। जब इसे कोई पौधा मिलता है, तब यह उसको अपना भोजन बनाता है और धीरे-धीरे उस पौधे को मार देता है। यह लगभग सभी प्रकार की मृदा में जीवित रह सकता है, लेकिन यह मुख्यत: उस मृदा को अधिक पसंद करता है, जिसमें लगातार सोलेनेसी कुल के पौधे लगाए जाते हों। इसका एक संक्रमित पौधे से दूसरे स्वस्थ पौधे तक आवागमन मृदा तथा पानी द्वारा होता है।

फ्यूजेरियम तथा *वर्टिसिलियम* मृदा में रहने वाले कवक हैं। ये मृदा में कई वर्षों तक अपना प्रतिरोधी स्पोर बनाकर जीवित रहते हैं और जब नया पौधा मिलता है, तो ये जड़ द्वारा उस पौधे में घुसते हैं। धीरे-धीरे ऊपर की तरफ बढ़ते जाते हैं। तने के अंदर पहुंचकर अपनी संख्या बढ़ाते हैं, जिसके कारण पौधे में पानी तथा भोजन का आदान-प्रदान रुक जाता है और पौधा सूख जाता है। *फ्यूजेरियम* मुख्यत: उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में तथा *वर्टिसिलियम* शीतोष्ण क्षेत्रों में जीवित रहते हैं। ■

म्लानि के आंतरिक लक्षण

रोग प्रबंधन

- टमाटर लगाने के लिए ऐसे खेत का चयन करना चाहिए, जहां पानी न इकट्ठा होता हो, क्योंकि जल जमाव होने से यह रोग अधिक होता है।
- टमाटर की खेती के लिए ऐसे खेत का चयन करना चाहिए, जिसमें जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो।
- हमेशा उचित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए, अधिक मात्रा में पोटाश उर्वरक का प्रयोग करना चाहिए।
- जिस खेत में म्लानि रोग एक बार आ गया हो, उसमें टमाटर के पौधे को 2-3 वर्ष तक नहीं लगाना चाहिए।
- टमाटर लगाने से पहले ही खेत को अच्छी तरह साफ करके गर्मी के महीने में गहरी जुताई कर छोड़ देना चाहिए।
- म्लानि रोग से फसल को बचाने के लिए ज्यादा पानी नहीं देना चाहिए, जब जरुरत हो, तभी पानी देना चाहिए।
- टमाटर की म्लानि प्रतिरोधी किस्मों जैसे-एफएल 7514 तथा बीएचएन 466 को ही लगाना चाहिए।
- संक्रमित मृदा को अच्छी तरह से कोलेरोपिक्रिन से उपचारित करना चाहिए।
- यदि जीवाणु म्लानि रोग लग गया हो, तो उसके बचाव के लिए स्ट्रेप्टोमाइसिन 0.05 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें। कवक म्लानि रोग से फसल को बचाने के लिए प्रोकोलोराज तथा ब्रोमूकोनाजोल का 0.2 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें।

प्रौढ़ अवस्था में म्लानि के लक्षण

महत्व

स्वदेशी फलों की उपयोगिता एवं खेती

इंदिरा देवी*

भारत में विभिन प्रकार के स्वदेशी फलों की समृद्ध विरासत है। कुछ फलों की सिफारिश व्यावसायिक रोपण के लिए की जा चुकी है। यह स्पष्ट है कि ऐसे कई और फल हैं, जो अभी भी व्यावसायिक बागवानी का इंतजार कर रहे हैं। काफी बड़ी संख्या में ऐसे स्वदेशी और अप्रचलित फल हैं, जिनका उपयोग केवल स्थानीय निवासियों द्वारा किया जा रहा है। प्रस्तुत लेख में ऐसे फलों की आहारीय उपयोगिता एवं बागवानी पर विस्तृत चर्चा की गई है।

अल्प प्रचलित फलों की कम खपत के कारण

- अल्प प्रचलित फलों और इनके पौष्टिक मूल्यों के बारे में कम ज्ञान और बिखराव
- इनमें से अधिकांश स्वदेशी फलों के पेड़ों की खेती की अनुपस्थिति
- टैनिन और ग्लाइकोसाइड्स जैसे घटकों के उच्च स्तर के कारण इन फलों को रखने के लिए गैर-प्राथमिकता है क्योंकि बहुत से लोग अच्छे स्वाद के साथ फल लेना पसंद करते हैं
- स्वदेशी फल न तो बड़े होते हैं और न ही गूदेदार होते हैं। इनमें बहुत सारे बीज होते हैं। फल जल्दी खराब होते हैं और ताजे रूप में संग्रहित करना मुश्किल होता है
- कांटेदार व्यवहार के कारण अधिकांश जंगली फलों को वास्तव में संभालना और उपभोग करना आसान नहीं होता है। इनमें से ज्यादातर स्थानीय बाजारों में ही उपलब्ध होते हैं और देश के अन्य हिस्सों में शायद ही कभी ज्ञात होते हैं।

प्रकृति ने भारत को कई प्रकार के फलों और सब्जियों से नवाजा है। फल जैसे-आम, सेब, केला, अमरूद और खट्टे फल अपने विशिष्ट स्वाद और सुगंध के कारण भरपूर मात्रा में उपलब्ध हैं। ये फल वैज्ञानिकों और बागवानी विशेषज्ञों का ध्यान भी आकर्षित करते हैं। इस प्रकार नए शोध उनकी गुणवत्ता निर्धारित करने में मदद करते हैं।

फलों के प्रेमियों और आम लोगों को यह भी याद रखना चाहिए कि ऐसे अन्य फल भी होते हैं, जिन्हें कभी-कभी 'अल्प प्रचलित फल' या 'कम ज्ञात फल' के रूप में भी जाना जाता है। ये फल विटामिन 'सी', कैरोटिनॉयड और एंटीऑक्सीडेंट के संदर्भ में काफी पौष्टिक होते हैं, जिन्हें पोषण का भंडार माना जाता है। प्रसिद्ध ब्रिटिश अभिनेता स्टीफन फ्राई ने कहा, 'कम से कम एक बार

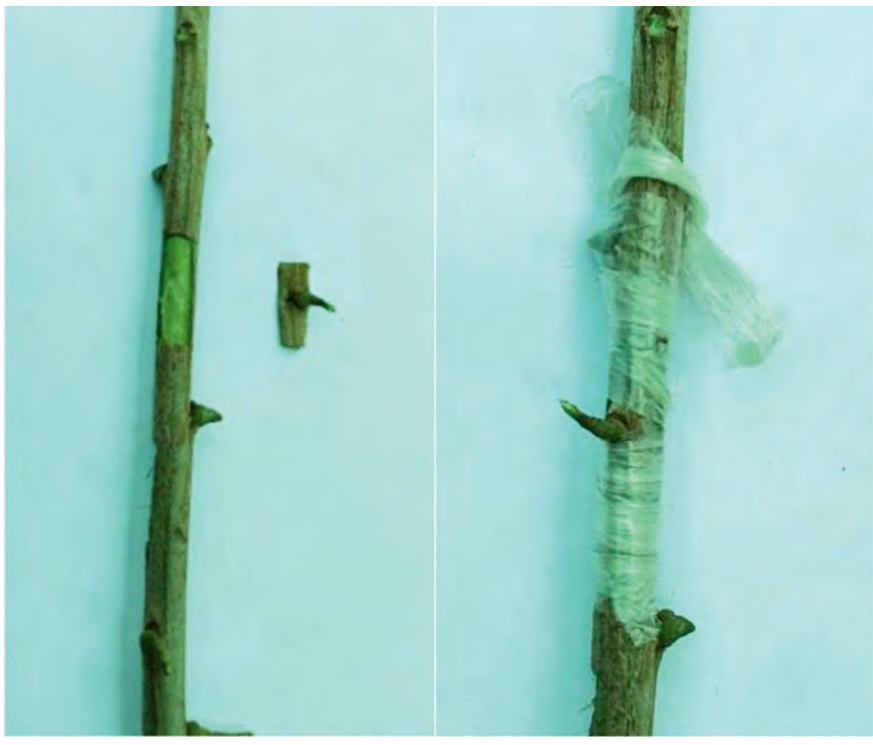

पैच बडिंग

*पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, एमएस रन्धावा रिसर्च स्टेशन, गंगीआं, दसुआ

बगीचे में हर पेड़ के हर फल को चखना, उनका पूरी तरह से अनुभव न होना सृष्टि का अपमान है।'

ये फल सस्ते होते हैं और देशभर में आसानी से उपलब्ध होते हैं और इन्हें कम देखभाल की आवश्यकता होती है। इन फलों के अलग-अलग स्वाद होते हैं और इन्हें सेब, आम, कीवीफ्रूट, चेरी, अंगूर आदि जैसे फलों की तुलना में, कठोर परिस्थितियों में उगाना आसान होता है। अल्प प्रचलित फल वाले पौधे स्वाभाविक रूप से रोग सहिष्णु होते हैं और गर्म, कठोर जलवायु वाली परिस्थितियों के अनुकूल होते हैं। भारत में ये फल मूल रूप से राजस्थान, मध्य प्रदेश और गुजरात के सूखे क्षेत्रों में पाए जाते हैं। पंजाब की परिस्थितियों में भी इन छोटे फलों की खेती की व्यापक संभावना है। ये फल औषधीय और चिकित्सीय गुणों के लिए जाने जाते हैं। स्थानीय जनजातियों द्वारा विभिन्न रोगों का इलाज करने के लिए ये उपयोग किये जाते हैं। इसके अलावा कुछ फलों में उत्कृष्ट सुगंध और स्वाद होता है और घरेलू स्तर पर व्यंजनों को तैयार करने के लिए ये इस्तेमाल किये जाते हैं।

आंवला *(एम्बलीका ओफ्फिसिनालिस)*

यह एक पतझड़ी फलने वाला पौधा है। आंवला भारत के कई राज्यों में उगाया जाता है और कई पोषण मूल्यों से युक्त होता है। यह फल विटामिन 'सी' का सबसे समृद्ध स्रोत है और एंटीऑक्सीडेंट के रूप में यह समय से पहले बूढ़ा होने से रोकता है। आंवला मधुमेह के रोगी में रक्त शर्करा को कम करता है। कई बाल टॉनिक में भी इसका उपयोग किया जाता है। यह बालों के विकास और रंजकता को समृद्ध करता है। इसकी अत्यधिक अम्लीय और कसैली प्रकृति के कारण यह फल ताजे रूप में या एक खाने योग्य फल के रूप में लोकप्रिय नहीं है। इसका उपयोग विभिन्न आयुर्वेदिक टॉनिक जैसे-च्यवनप्राश, त्रिफला, आदि को तैयार करने में किया जाता है। आंवला फल को कई तरह के खाद्य उत्पादों जैसे कि जैम, जेली, कैंडी, टॉफी, अचार, सॉस, स्क्वैश, जूस, आरटीएस पेय, सीडर, श्रेड्स, सूखे पाउडर इत्यादि बनाने में उपयोग किया जाता है।

बेल

रूटस्टॉक तैयार करने के लिए बीजों को मई में फलों की तुड़ाई के बाद नर्सरी क्यारी में बोया जाता है। बेल के बीज के डोरमेंसी में नहीं जाने की वजह से बोने के बाद 12-15 दिनों के भीतर अंकुरित हो जाते हैं। एक वर्ष की पेंसिल मोटाई की पौध में जून में पैंच बडिंग की जाती है। इसे फरवरी-मार्च और अगस्त-सितंबर के दौरान खेत में लगाया जा सकता है।

बेर *(सिजिजियम मोरिशिआना)*

बेर में विटामिन 'सी' उच्च मात्रा में पाया जाता है। फल की त्वचा के पास की बजाय फल के बीज की तरफ अधिक विटामिन 'सी' पाया जाता है। यह विटामिन 'ए' और बी-कॉम्प्लेक्स का भी समृद्ध स्रोत है। इसके फलों का उपयोग चटनी, सूखे बेर, मुरब्बा, जेली आदि जैसे कई उत्पादों को बनाने के लिए भी किया जा सकता है। बेर की जड़ और छाल से बना काढ़ा दस्त के लिए अच्छा है और पत्ती का काढ़ा गले में खराश और मसूढ़ों से खून आने पर उपयोगी होता है। बेर की जड़ों के पाउडर में भी औषधीय गुण होते हैं, जिसे अल्सर, बुखार और घाव को ठीक करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

अंजीर *(फाइकस केरिका)*

यह एक अत्यधिक पौष्टिक फल है, जिसमें अलग-अलग सांद्रता में प्रोटीन, कैल्शियम, आयरन, विटामिन 'ए' और थायमीन पाया जाता है। अंजीर का सेवन ताजा या सूखे, संरक्षित या डिब्बाबंद पदार्थ के रूप में किया जाता है। ताजे अंजीर पौष्टिक होते हैं। इन्हें मिष्ठान के रूप में या जैम, जेली, हलवा, केक आदि बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। यह फल रेचक गुण होने की वजह से मूल्यवान है। अंजीर फोड़े और अन्य त्वचा संक्रमण को ठीक करने के लिए भी उपयोग किया जाता है।

पोषक तत्वों से भरपूर हैं अल्प प्रचलित फल

ऐसे अल्प प्रचलित फलों के लाभ उनकी कमियों से कहीं अधिक हैं। ये फल पोषक तत्वों के समृद्ध स्रोत हैं और उन्हें कम ध्यान और श्रम की आवश्यकता होती है। ये फल उन छोटे किसानों के लिए बेहतर विकल्प हो सकते हैं, जिनके पास कम भूमि है, क्योंकि इनमें से कुछ फल मेड़ों पर उगाए जा सकते हैं। इनके वृक्ष हेज और विंड ब्रेकर के रूप में कार्य करते हैं जैसे कि करौंदा, अंजीर और जामुन इत्यादि। देश के फल उत्पादकों को प्रमुख फलों से परे सोचना चाहिए और राज्यों में फलों की खेती में विविधता लाने के लिए इन छोटे फलों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इन कम ज्ञात फलों की खेती के लिए कई राज्यों की कृषि जलवायु परिस्थितियां अत्यधिक उपयुक्त हैं। जिन क्षेत्रों में सीमांत और बंजर भूमि के अधीन ज्यादा क्षेत्रफल है, खराब गुणवत्ता वाली मृदा या जल संसाधनों की कमी है, ऐसे क्षेत्रों को इन फलों की खेती के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। अल्पप्रचलित फलों की अधिकांश किस्में कठोर कृषि-जलवायु परिस्थितियों के प्रति सहिष्णु हैं। अल्पप्रचलित फसलों में छोटे किसानों को कच्चे रूप में या साथ ही मूल्यवर्धित उत्पादों से उनकी बिक्री से अच्छा लाभ दिलाकर आर्थिक सुरक्षा देने की क्षमता है। इनके अनुसंधान एवं विकास कार्य तथा किसानों में अल्पप्रचलित फलों की खेती के प्रति जागरूकता पर विचार किया जाना चाहिए।

एयर-लेयरिंग

जामुन (*सिजिजियम क्यूमीनाइ*)

जामुन का पेड़ आदर्श रूप से विंडब्रेक और सड़क के किनारे वृक्षारोपण के लिए अनुकूल है। यह एक मिठाई फल के रूप में लिया जाता है और पेय, स्क्वैश, जैम, जेली और वाइन बनाने में भी उपयोग किया जाता है। इसका इस्तेमाल रक्त शोधन, मधुमेह और दस्त में किया जाता है। जामुन के बीज का पाउडर मूत्र में शर्करा की मात्रा को कम करता है।

करौंदा (*कैरिसा करैंडस*)

यह फल आयरन का सबसे समृद्ध प्राकृतिक स्रोत है। पैर और हाथ की त्वचा की दरार को ठीक करने में इसके बीज के पाउडर का उपयोग किया जाता है। करौंदा का बागान दोहरी भूमिका निभाता है। एक कांटेदार पौधा होने के नाते इसे मेड़ों के रूप में उगाया जा सकता है। इस प्रकार बाग को आवारा पशुओं से बचाया जा सकता है। दूसरा इसका फल अचार, जैम इत्यादि घरेलू व्यंजनों को बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

फालसा (*ग्रेविआ एशिआटिका*)

यह फल विटामिन और खनिजों का संभावित स्रोत है। सिट्रिक एसिड मुख्य रूप से फालसा फल में मौजूद होता है, जिसमें कुछ मात्रा में मैलिक एसिड भी होता है। इसमें उच्च मात्रा में विटामिन 'ए' और एंटीऑक्सीडेंट होता है। फालसा फल फ्लेवोनोइड्स, कैरोटेनॉइड्स और एंथोसायनिन का समृद्ध स्रोत है। इसमें पोटेशियम भी होता है, जो चयापचय और रक्तचाप को सामान्य करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

लोकाट (*एरिओबोटरया जेपोनिका*)

त्वचा रोग और मधुमेह को ठीक करने में लोकाट के पत्ते फायदेमंद होते हैं। पत्तों से निकले रस को सूजन कम करने और खांसी ठीक करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

बेल (ऐगल मार्मेलोस)

भारत में सबसे पुराने खेती वाले फलों में से एक होने के नाते, इसका एक पौराणिक महत्व है। बेल के फल का उपयोग आयुर्वेदिक उपचार के रूप में दस्त, आंख का सूखापन और सामान्य सर्दी को ठीक करने में किया जाता है। इससे जैम, जेली, स्क्वैश और अन्य पेय पदार्थ भी तैयार किये जाते हैं।

वृक्षारोपण की विधि और समय

आंवला: यह पैच बडिंग द्वारा जून-सितंबर के दौरान सफलतापूर्वक प्रसारित किया जा सकता है। देसी आंवला के फलों को जनवरी-फरवरी के दौरान एकत्र किया जाना चाहिए और मार्च के पहले पखवाड़े में बीज बोना चाहिए। आंवला को फरवरी-मार्च और अगस्त-सितंबर के दौरान 7.5 × 7.5 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है।

बेर: बेर के पौधे जून-सितंबर के दौरान टी बडिंग के द्वारा तैयार किये जाते हैं। नवनिर्मित पौधों को आमतौर पर फरवरी-मार्च या अगस्त-सितंबर के दौरान 7.5 × 7.5 मीटर वर्ग प्रणाली में प्रत्यारोपित किया जाता है।

अंजीर: अंजीर को व्यावसायिक रूप से सख्त लकड़ी की कटिंग के माध्यम से प्रसारित किया जाता है। 3-6 नोड्स वाले लगभग 30-45 सें.मी. लंबी कटिंग, जो कि आमतौर पर पिछले सीजन की वृद्धि से बने होती हैं और फरवरी के दौरान नर्सरी बेड में लगाई जाती हैं। रोपण के लिए सबसे अच्छा समय जनवरी के मध्य से फरवरी के पहले पखवाड़े तक है।

जामुन: यह बीज और वानस्पतिक तकनीक दोनों द्वारा प्रसारित किया जाता है।

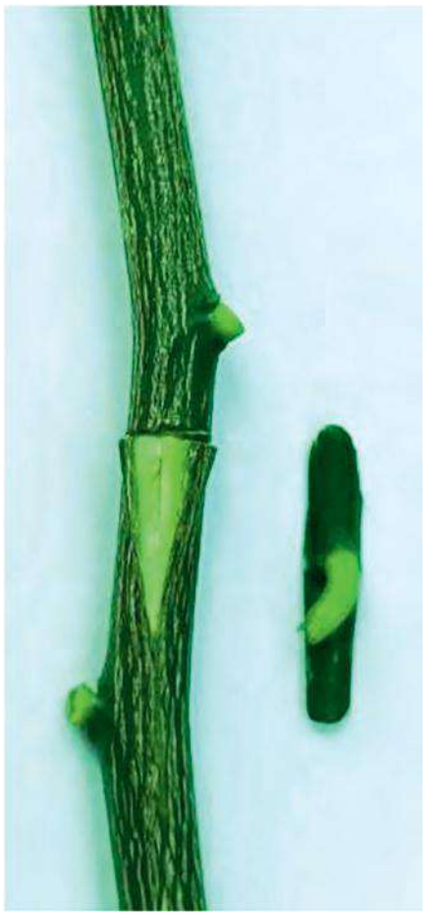

टी बडिंग

बीजों में कोई निष्क्रियता नहीं होती है, इसलिए 10-15 दिनों के भीतर ताजा बीज बोए जा सकते हैं। जामुन में पौधे तैयार करने के लिए बडिंग सबसे सफल तरीका है।

करौंदा और फालसा: ये आमतौर पर बीजों से उगाए जाते हैं। वानस्पतिक विधि बहुत आम नहीं हैं। करौंदा के ताजे बीज अगस्त-सितंबर से नर्सरी में बोए जाते हैं, जबकि जुलाई-अगस्त का समय फालसा के बीज बोने के लिए सबसे सही समय है।

लोकाट: इसका प्रसार इनरचिंग और एयर-लेयरिंग के माध्यम से किया जाता है। लोकाट के बीज आसानी से अंकुरित हो जाते हैं, जब ये फल से निकालने के तुरंत बाद बोये जाते हैं। बीजों को निकालने के बाद सूखने नहीं दिया जाना चाहिए। गर्मी और प्रकाश के संपर्क में आने से बीज का अंकुरण कम होता है। ताजे बीज को नम रेत में अप्रैल-मई के दौरान बोया जाता है। जब अंकुर 4-5 सें.मी. लंबे होते हैं, तो उन्हें आगे की वृद्धि और ग्राफ्टिंग के लिए नर्सरी में प्रत्यारोपित किया जाता है। लोकाट फरवरी-मार्च और अगस्त-सितंबर के दौरान खेत में लगाया जाता है। इसे अगस्त-सितंबर के दौरान 6.5 × 6.5 मीटर के अंतर पर लगाया जाना चाहिए। ■

ईसबगोल की जैविक खेती है लाभकारी

मोती लाल मीणा*, ऐश्वर्य डूडी* और **धीरज सिंह***

वर्तमान में भारत, विश्व का प्रथम ईसबगोल उत्पादक देश है, जिसका कुल उत्पादन वर्ष 2018-19 में लगभग 98600 टन था तथा कुल 137777 हैक्टर क्षेत्रफल में खेती की गई थी। ईसबगोल की उत्पादकता 670 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर है। गुजरात और राजस्थान, देश में सर्वाधिक ईसबगोल उत्पादक राज्य हैं, जो पूरे देश का लगभग 90 प्रतिशत ईसबगोल उत्पादन करते हैं। अमेरिका, ईसबगोल का सर्वाधिक आयातक देश है। ईसबगोल की मांग लगातार बढ़ती चली जा रही है। मांग के अनुसार इसकी खेती किसानों के लिए लाभदायक साबित हो सकती है। ईसबगोल का वानस्पतिक नाम *प्लेन्टेगा ओवाटा* है। इसका बहुपयोगी इस्तेमाल है। जिस ईसबगोल को बहुराष्ट्रीय कम्पनियां 1800 रुपये प्रति कि.ग्रा. की दर से बेचती हैं, उसका मूल्य हमारे किसानों को केवल 20 रुपये प्रति कि.ग्रा. ही मिलता है। इस विषय पर चिन्तन एवं मनन की आवश्यकता है।

ईसबगोल के बीजों में पाये जाने वाला पतला छिलका ही इसका औषधीय उत्पाद होता है। इस छिलके में एक लसलसा पदार्थ होता है, जिसमें इसके वजन से कई गुना अधिक पानी अवशोषित करने की क्षमता होती है। इसे पेट की सफाई, कब्ज, अल्सर, बवासीर, मल तंत्र, दस्त, आंव, पेचिश जैसे शारीरिक रोगों को दूर करने में आयुर्वेदिक औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार ईसबगोल को विभिन्न रोगों के उपचार में इस्तेमाल किया जाता है।

*भाकृअनुप-काजरी, कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली-मारवाड़-306401 (राजस्थान)

पादप सुरक्षा

इस फसल पर लगने वाला प्रमुख रोग मृदुरोमिल फफूंद है। यह रोग फसल में बालियां बनते समय दिखाई देता है। यह फफूंद सबसे पहले पत्तियों पर धब्बे के रूप में प्रकट होता है तथा धीरे-धीरे पूरी पत्ती पर फैलकर उसे नष्ट कर देता है। अधिक नमी होने पर इस रोग का फैलाव और बढ़ जाता है। इसकी रोकथाम के लिए निम्न उपाय किये जाने चाहिए:

- फसल को नवम्बर मध्य से दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में बो देना चाहिए।
- खड़ी फसल पर राख का बुरकाव करना चाहिए। इससे मृदुरोमिल फफूंद का नियंत्रण किया जा सकता है।
- स्वस्थ, रोग-कीटरहित बीज का चयन कर 6-8 मि.ली. ट्राइकोडर्मा तरल से प्रति कि.ग्रा. बीज को उपचारित कर बुआई करनी चाहिए।
- अच्छी पकी हुई जैविक खाद का प्रयोग 5.0 टन प्रति हैक्टर की दर से भूमि की तैयारी के समय करना चाहिए।
- खेत की बाड़ या बीच में कई प्रकार के फूलदार वृक्ष/झाड़ी लगाने चाहिए, जिससे फसल के लिए लाभकारी कीटों को आश्रय व भोजन मिलता रहे। खेत की बाड़ पर कुछ वृक्ष नीम के भी लगाने चाहिए, ताकि जैविक कीट नियंत्रण के लिए निम्बोली मिल सके।
- नीम आधारित जैविक कीट घोल का छिड़काव सायंकाल ही करना चाहिए।

ईसबगोल की फसल से खरपतवार निकालना

मृदा और जलवायु

ईसबगोल रबी मौसम की फसल है। इसके लिए ठंडी और सूखी जलवायु अति उत्तम होती है। भारत में, विशेषकर उत्तरी तथा पश्चिमी भागों में, मध्य नवम्बर से मध्य दिसम्बर के बीच का समय इसकी बुआई के लिए अति उत्तम है। ऐसी मृदा जिसका पी-एच मान 7.0 से 7.9 के मध्य हो, इसके लिए उचित रहती है। ईसबगोल की खेती के लिए दोमट बलुई मृदा, जिसमें जल निकास का उचित प्रबंध व पी-एच 7-8 तक हो, सर्वोत्तम है। गोबर की सड़ी खाद 10 टन प्रति हैक्टर की दर से अंतिम जुताई के समय मृदा में मिला देनी चाहिए।

जैविक मृदा व बीजोपचार

ट्राइकोडर्मा एक दीर्घ अवधि तक असरदार, लाभकारी, वातावरण को प्रदूषणरहित, पशुओं एवं मनुष्य के लिए सुरक्षित जैविक सुरक्षित फफूंदनाशी है। इसको बीज/प्राकृतिक खादों के साथ मिलाकर बीज उपचार/मृदा उपचार किया जा सकता है। ईसबगोल के बीजों को हल्का गीला कर 4 से 6 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से अच्छी तरह मिलाकर बीजोपचार करें। एक कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा 25 कि.ग्रा. प्राकृतिक/जैविक खाद में मिलाकर प्रति एकड़ मृदा उपचार करें। ईसबगोल में तनागलन व उकठा रोग के प्रभावी नियंत्रण के लिए गोबर की खाद के साथ ट्राइकोडर्मा स्पी./3 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर व स्यूडोमोनास स्पी./3 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर या 100 कि.ग्रा. केंचुआ खाद ट्राइकोडर्मा स्पी./5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर व स्यूडोमोनास स्पी./5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर से भूमि उपचार किया जा सकता है।

ईसबगोल की जैविक खेती

सारणी: ईसबगोल की खेती में अनुमानित लागत एवं लाभ का आर्थिक ब्यौरा (प्रति हैक्टर)

क्र.स.	लागत विवरण	खर्चा (रुपए में)	प्राप्ति विवरण (रुपये में)
1	खेत की तैयारी	4500	बीज (15 क्विंटल)/65 रुपये प्रति कि.ग्रा. = रुपये 97500
2	रोपण सामग्री (बीज 10 कि.ग्रा.)/80 रुपये प्रति कि.ग्रा.	800	
3	बुआई की मजदूरी	2000	
4	उर्वरक व कीटनाशक	2000	
5	सिंचाई व निराई-गुड़ाई	1600	
6	कटाई की मजदूरी	1800	
7	अन्य खर्च (संग्रहण, ढुलाई, आदि)	1400	
	कुल लागत	14100	
लाभ-लागत: शुद्ध लाभ रुपये कुल प्राप्ति-कुल लागत			
शुद्ध लाभ रुपये 97500-14100 = 83400 रुपये का शुद्ध लाभ			

बूंद-बूंद सिंचाई से ईसबगोल की हरी-भरी फसल

खाद और उर्वरक प्रबंधन

ईसबगोल की फसल से अधिक पैदावार लेने के लिए 15-20 गाड़ी सड़ी हुई गोबर की खाद अगर उपलब्ध हो, तो आखिरी जुताई के समय खेत में मिलाएं। इस फसल को कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। अधिक उपज के लिए बोने से पहले 20-25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 25 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर की दर से खेत में मिला देना चाहिए। इसके बीजों को एजोटोबैक्टर कल्चर से 10 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करने पर 15-20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की बचत की जा सकती है।

सिंचाई और निराई-गुड़ाई

बुआई के तुरंत बाद एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। जब तक खेत में अंकुरण दिखाई नहीं देता है, तब हल्की सिंचाई करते

ईसबगोल का बीज और भूसी

ईसबगोल की उन्नत किस्में

आर.आई-89

इस किस्म के पौधों की ऊंचाई 30 से 40 सें.मी. होती है। इसकी परिपक्वता अवधि 110-115 दिनों की है। इस किस्म की उपज 12-16 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

आर.आई.-1

इस किस्म के पौधों की ऊंचाई 29-47 सें.मी. होती है तथा 110-120 दिनों में फसल पक जाती है। इसकी औसत उपज क्षमता 12 से 16 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

जी.आई-2

यह किस्म 118-125 दिनों में पक जाती है। इसकी औसत उपज क्षमता 14 से 15 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

एम.आई.जी.-2

यह किस्म अधिक उपज देने वाली है, जो तीन सिंचाइयों में ही पक जाती है। इसकी औसत उपज 15 से 18 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

आई.आई.-1 (इंदौर ईसबगोल)

यह किस्म चार सिंचाइयों में पक जाती है। फसल एक साथ पकती है तथा पौधे तुलासिता रोग प्रतिरोधी होते हैं। इसकी औसत उपज लगभग 12 से 15 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

जवाहर ईसबगोल-4

यह शुष्क तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए विकसित अधिक उपज देने वाली किस्म है। इसकी औसत उपज क्षमता 14 से 17 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

रहना चाहिए। वैसे इस फसल में तीन सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई बुआई के तुरंत बाद, दूसरी सिंचाई 30-35 दिनों के अंदर तथा तीसरी 70 दिनों बाद करते हैं।

मोयला एवं माहूं

ये कीट ईसबगोल की फसल को बहुत नुकसान पंहुचाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए नीम तेल (300 पी.पी.एम.) का 15 मि. ली. प्रति 1 लीटर पानी की दर से मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकतानुसार दोबारा छिड़काव किया जा सकता है।

कटाई एवं उपज

ईसबगोल की फसल 115 से 130 दिनों में तैयार हो जाती है। पौधों में 60 दिनों बाद बालियां निकलने का क्रम प्रारंभ हो जाता है। बाली को दबाने पर यदि दाना बाहर निकलने लगे तभी उसकी कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई प्रात:काल करनी चाहिए, ताकि बीज न गिरे। कटी हुई फसल खलिहान में 2-3 दिनों तक सुखाने के बाद बीजों को झटककर निकाल दें या मड़ाई करके बीजों को निकाल लें। दानों की सामान्य पैदावार 12-16 क्विंटल तथा वैज्ञानिक विधि को अपनाने पर 18 क्विंटल प्रति हैक्टर मिल जाती है।

बाजार मूल्य

ईसबगोल के बीजों का वर्तमान बाजार मूल्य 40-50 रुपये प्रति कि.ग्रा. तक है। इस प्रकार कृषक 1 हैक्टर में उचित विधियां अपनाकर लगभग 83,400 रुपये का शुद्ध लाभ कमा सकते हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि ईसबगोल एक बहुपयोगी एवं निर्यातोन्मुखी फसल है, जिसे युवा व्यावसायिक खेती अथवा औषधि तैयार करने की इकाई के रूप में अपनाकर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। शुष्क क्षेत्रों, जहां पर कम वर्षा व आर्द्रता हो, वहां पर यह अधिक मुनाफे वाली फसल है। इससे वर्ष के एक मौसम में शुद्ध लाभ लगभग 83,400 रुपये का होता है, जो किसी और फसल से नहीं प्राप्त कर सकते हैं।

निवेदन

लेखक बंधु *फलफूल* पत्रिका के लिए अपने लेख और संबंधित फोटो, कवरिंग लैटर के साथ सिर्फ ई-मेल पर ही भेजें। ध्यान रखें कि फोटो जेपीजे फॉर्मेट में और उच्च रेज्योल्यूशन की हों। लेख में अधिकतम 1200 शब्दों की संख्या रखने का प्रयास करें। इसके अतिरिक्त सुझाव और प्रतिक्रियाएं भी ई-मेल के माध्यम से भेज सकते हैं। भेजने के लिए कृपया कृतिदेव 010 टाइप फेस का प्रयोग करें।

हमारा ई-मेल है :

phalphul@gmail.com

–संपादक

चिकनी तोरई की व्यावसायिक खेती

एस.के. सिंह*, एस.के. खरे*, यू.एस. धाकड़* और **बी.एस. किरार***

चिकनी तोरई अत्यन्त ही महत्वपूर्ण एवं पौष्टिक गुणों से भरपूर सब्जी फसल है। इसमें विटामिन 'सी', जिंक, आयरन, राइबोफ्लेविन, थायमीन, फॉस्फोरस और फाइबर पाया जाता है। इसके अलावा इसमें अधिक वसा, कोलेस्ट्रॉल और कैलोरी पाई जाती है। ये वजन कम करने में मदद करते हैं। इसके अलावा यह कई रोगों से निजात दिलाती है। चिकनी तोरई की खेती देश के लगभग सभी राज्यों में सफलतापूर्वक की जाती है। इसके कोमल मुलायम फलों को सब्जी के उपयोग में लाया जाता है। इसकी तासीर ठंडी होती है, साथ ही सूखे बीजों से तेल भी निकाला जाता है।

चिकनी तोरई की खेती के लिए गर्म एवं आर्द्र जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी खेती खरीफ एवं जायद दोनों ऋतुओं में सफलतापूर्वक की जाती है। चिकनी तोरई की खेती के लिए 35-38 डिग्री सेल्सियस तापमान सर्वोत्तम माना जाता है। इसकी खेती उचित जल निकास वाली जीवांशयुक्त सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। अच्छी पैदावार के लिए बलुई दोमट या दोमट मृदा, जिसका पी-एच मान 6-7 हो, उपयुक्त मानी जाती है।

खाद एवं उर्वरक

चिकनी तोरई की अच्छी पैदावार के लिए 20-25 टन सड़ी गोबर की खाद के अतिरिक्त 30-40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 20-25 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 20-25 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय खेत में डालते हैं। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा बुआई के 25-30 दिनों बाद ट्रॉप ड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए।

तोरई फसल

बुआई समय

खरीफ फसल की बुआई जून-जुलाई में एवं जायद फसल की बुआई फरवरी-मार्च में की जाती है।

बीज मात्रा

चिकनी तोरई की बुआई के लिए प्रति हैक्टर 5-7 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है।

बुआई विधि

बुआई के लिए नाली विधि सबसे सर्वोत्तम मानी जाती है। इस विधि में खेत की तैयारी के बाद 2.5-3.0 मीटर की दूरी पर 45 सें.मी. चौड़ी तथा 30-40 सें.मी. गहरी नालियां बना लेते हैं। इन नालियों के दोनों

*जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, टीकमगढ़ (मध्य प्रदेश)

उन्नत प्रजातियां

पूसा स्नेहा

यह किस्म भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली द्वारा विकसित की गई है। इस प्रजाति के फल गहरे हरे एवं 22-25 सें.मी. लंबे होते हैं। बुआई के 48-55 दिनों बाद फल तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। इसका उत्पादन औसतन 210-220 क्विंटल/हैक्टर है।

स्वर्ण प्रभा

इस किस्म के फल मध्यम आकार के होते हैं। इसकी लंबाई 22-25 सें.मी. होती है और इसके फल बुआई के 68-76 दिनों बाद तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। इसका उत्पादन औसतन 225-235 क्विंटल/हैक्टर है।

कल्याणपुर हरी चिकनी

यह किस्म चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा विकसित की गई है। इसके फल मध्यम आकार के होते हैं एवं इन पर हल्की धारियां बनी होती हैं। इसका उत्पादन औसतन 360-380 क्विंटल/हैक्टर है।

काशी ज्योति

यह किस्म भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा विकसित की गई है। इसके फल हल्के हरे और 20-25 सें.मी. लंबे होते हैं। बुआई के 55-60 दिनों में फल प्रथम तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। इसका उत्पादन औसतन 115-120 क्विंटल/हैक्टर है।

काशी दिव्या

यह किस्म भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा विकसित की गई है। फल हल्के हरे व 22-25 सें.मी. लंबे होते हैं। फल बुआई के 45-50 दिनों के बाद तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। इसका उत्पादन औसतन 145-155 क्विंटल/हैक्टर है।

काशी सौम्या

यह एक संकर किस्म है, जो भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा विकसित की गई है। इसके फल गहरे हरे और 22-25 सें.मी. लंबे होते हैं। फलों का भार 150-165 ग्राम के बीच होता है। फल प्रथम तुड़ाई के लिए बुआई के 48-52 दिनों बाद तैयार हो जाते हैं। इसका उत्पादन औसतन 190-200 क्विंटल/हैक्टर है।

किनारों पर 50 सें.मी. की दूरी पर बीज की बुआई करते हैं। एक जगह दो बीज लगाने चाहिए तथा बीज जमने के बाद एक पौधा सावधानीपूर्वक निकाल देना चाहिए।

सिंचाई

चिकनी तोरई की वर्षाकालीन फसल के लिए सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। वर्षा न होने की स्थिति में यदि खेत में नमी की कमी हो, तो सिंचाई कर देनी चाहिए। जायद फसल की पैदावार सिंचाई पर निर्भर करती है। गर्मियों में 5-7 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

खेत को खरपतवारमुक्त रखने के लिए निराई व गुड़ाई समय-समय पर करते रहना चाहिए।

तुड़ाई एवं भण्डारण

फलों की तुड़ाई हमेशा मुलायम अवस्था में करनी चाहिए। देर से तुड़ाई करने पर उसमें कड़े रेशे बन जाते हैं। फलों की तुड़ाई 6-8 दिनों के अंतराल पर करते रहना चाहिए। पूरे फसलकाल में लगभग 7-8 तुड़ाइयां की जा सकती हैं। फलों की तुड़ाई के बाद इन्हें ताजा रखने के लिए ठण्डे छायादार स्थानों का चयन करना चाहिए। फलों को ताजा बनाये रखने के लिए बीच-बीच में उन पर पानी का छिड़काव भी करते रहना चाहिए।

प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

डाउनी मिल्ड्यू

यह रोग *स्यूडोपेरान्स्पोरा क्यूबेन्सिस* नामक फफूंद के कारण होता है। अधिक नमी वाले क्षेत्रों में इसका प्रकोप ज्यादा होता

पोषण से भरपूर तोरई

है। लगातार ग्रीष्मकालीन वर्षा के समय इसके द्वारा होने वाला संक्रमण अधिक होता है। इस रोग के लक्षण में पत्तियों की ऊपरी सतह पर कोणीय पीले धब्बे बनते हैं, जो आगे चलकर पत्तियों की निचली सतह पर फैल जाते हैं और पत्तियां सूखकर गिर जाती हैं।

नियंत्रण: रोगग्रसित पत्तियों को तोड़कर मृदा में दबा देना चाहिए। रोग के संक्रमण के समय मैन्कोजेब के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। अधिक संक्रमण के समय मेटालाक्सिल 8 प्रतिशत + मैन्कोजेब 64 प्रतिशत के 2.5-3.0 ग्रा. प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

वैज्ञानिक विधि से तोरई की उन्नत पैदावार

प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

कद्दू का लाल कीट

इस कीट के प्रौढ़ व सूंडियां दोनों ही फसल को नुकसान पहुंचाती हैं। इसके प्रौढ़ कीट छोटे पौधों की कोमल पत्तियों को खा जाते हैं, जिससे पौधे पत्तीरहित हो जाते हैं। इसकी सूंडियां जमीन के नीचे पौधों की जड़ों एवं तनों में छेद कर देती हैं। इससे पौधे मर जाते हैं।

नियंत्रण: डाइक्लोरवास 76 ई.सी. के 1.0-1.5 मि.ली./लीटर पानी के घोल का बीजपत्रीय अवस्था में छिड़काव कर नियंत्रण किया जा सकता है।

सफेद मक्खी

ये कीट पौधों का रस चूसते हैं तथा पत्तियों पर इनके द्वारा विसर्जित मल द्वारा काले कज्जली मोल्ड्स विकसित हो जाते हैं। इससे पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं हो पाती है। इसके अतिरिक्त ये पीला मोजेक रोग के विषाणु को भी एक पौधे से दूसरे पौधे में फैलाते हैं।

नियंत्रण: बीज को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू.पी. 2.5 मि.ली./कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बुआई करें। फसल की बुआई से लगभग 18-20 दिनों पूर्व खेत के चारों ओर दो पंक्ति बाजरा की फसल को बार्डर फसल के रूप में उगायें। संक्रमण के समय इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल./0.4 मि.ली./लीटर घोल का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करने से उपरोक्त कीट को नियंत्रित किया जा सकता है।

लीफ माइनर

इसके लार्वा पत्तियों में सुरंग बनाकर क्लोरोफिल को खाते हैं, जिसके कारण प्रकाश संश्लेषण क्रिया प्रभावित होती है।

नियंत्रण: इसे 4 प्रतिशत नीम की गिरी के अर्क का छिड़काव करने से नियंत्रित किया जा सकता है।

फल मक्खी

ये कीट चिकनी तोरई को अधिक क्षति पहुंचाते हैं। वयस्क मक्खियां मुलायम फलों के छिलके में छेदकर अण्डा देती हैं, जो फल को अन्दर से खाकर सड़ा देते हैं। ग्रीष्मकालीन वर्षा के समय अधिक आर्द्रता होने पर इनका संक्रमण ज्यादा होता है।

नियंत्रण: गहरी ग्रीष्मकालीन जुताई कर प्यूपा को नष्ट करें। खेत में 10-12 मीटर की दूरी पर मक्का की फसल उगायें। खेत से संक्रमित फलों को इकट्ठा कर जमीन में गाड़कर नष्ट कर दें। इसकी रोकथाम के लिए 4 प्रतिशत नीम की गिरी के अर्क का छिड़काव किया जा सकता है।

पाउडरी मिल्ड्यू

इस रोग का कारक *स्फेरोथिका फुलजीनिया* एवं एरीसाइफी साइकोरेसीरम फफूंद है। इस फफूंद का संक्रमण सफेद से ग्रे पाउडर के रूप में पौधों के सभी भागों पर होता है। गम्भीर रूप से संक्रमित पत्तियां भूरे रंग की होकर सड़ जाती हैं तथा लताएं मर जाती हैं।

नियंत्रण: पौधों के संक्रमित भाग को अलग कर देना चाहिए। बाविस्टिन/कार्बेन्डाजिम से 2.0-2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बुआई करनी चाहिए।

फ्यूजेरियम उकठा रोग

पौधों का मुरझाना, गोंदीय पदार्थ का निकलना, तने के संवहन व ऊतकों का भूरा पड़ जाना आदि इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं।

नियंत्रण: कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत या कार्बेन्डाजिम + मैंकोजेब 0.25 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

गिल्की या चिकनी तोरई का पीला मोजेक

यह एक विषाणुजनित रोग है। इसके कारण कभी-कभी फसल में 100 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है। इस रोग का लक्षण पौधों की नई पत्तियों पर पीले धब्बे के रूप में दिखाई देता है। गम्भीर संक्रमण के समय पौधों की पत्तियां छोटी चित्तीदार हो जाती हैं तथा फल अनियमित आकार के हो जाते हैं। इस रोग का विषाणु सफेद मक्खी द्वारा फैलता है।

नियंत्रण: इस सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 0.5 मि.ली./लीटर पानी के घोल का छिड़काव किया जा सकता है।

शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में मेंहदी की खेती

एम.बी. नूर मोहम्मद, ए.के. शुक्ला, कमला कुमारी चौधरी, कीर्तिका ए., दीपक कुमार गुप्ता और **सीता राम मीणा**

मेंहदी एक बारहमासी झाड़ी है, जो राजस्थान के शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में व्यावसायिक पैमाने पर उगाई जाती है। इसकी नारंगी-लाल रंग की डाई को जैव अनुकूल प्रकृति के लिए महत्वपूर्ण बताया गया है। कृत्रिम (सिंथेटिक) रंगों के कैंसरजनित प्रभावों के बारे में लोगों के बीच जागरूकता बढ़ी है। मेंहदी की अधिक उपज के लिए हमें विकसित किस्में तैयार करनी होंगी। खेती का क्षेत्रफल भी बढ़ाना होगा, तभी उपज बढ़ने की संभावना है। राजस्थान के पाली जिले के सोजत क्षेत्र से मेंहदी की आशाजनक किस्मों को पत्तियों की उपज क्षमता और अच्छे डाई के लिए पहचाना गया है। कम वर्षा एवं सूखाग्रस्त क्षेत्रों में मेंहदी एक लाभदायक खेती है तथा ग्रामीण किसानों की आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

मेंहदी एक सख्त और कठोर प्रवृति की झाड़ी है, जो विभिन्न मृदा और जलवायु परिस्थितियों में बढ़ने में सक्षम है। यह गहरी, महीन और मध्यम बनावट वाली मृदा में अच्छी तरह से पनपती है। इसके लिए मृदा का पी-एच मान 7.7 से 9.9 के बीच अच्छा माना जाता है। मेंहदी का पौधा ई.सी. 8 से 12 डी.एस. सेमी-1 की मध्यम लवणता को सहन करने की क्षमता रखता है। खारी मृदा में भी मेंहदी की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है और पत्तियों की गुणवत्ता भी बेहतर होती है। अच्छी गुणवत्ता वाली मेंहदी की पत्तियों के लिए आमतौर पर गर्म, शुष्क, मध्यम वर्षा और खुली जलवायु की जरूरत होती है। राजस्थान में मेंहदी उगाने वाले अधिकांश क्षेत्रों में लगभग 400 मि.मी. वार्षिक वर्षा होती है। मेंहदी की सूखी पत्तियों की औसत उत्पादकता 1.0 टन प्रति हैक्टर है। वर्षा का वितरण महत्वपूर्ण है। फसल को उचित पकने और पत्तियों की उच्च डाई सामग्री के लिए ठंडी रातों के साथ शुष्क धूप की आवश्यकता होती है।

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान); क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, पाली-मारवाड़-306 401 (राजस्थान)

मेंहदी के प्रकार

अभी तक मेंहदी की कोई भी किस्म जारी नहीं की गई। किसान अपने खेत में मेंहदी के पौधे बीजों द्वारा तैयार करते हैं। भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (काजरी) और क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, पाली में पत्तियों का उत्पादन बढ़ाने के साथ मेंहदी की पहचान और उत्पादन के लिए शोध कार्य शुरू किये गये हैं। मेंहदी के खेतों में देखा गया है कि इसकी विभिन्न प्रजातियां होती हैं। मेंहदी शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में कुछ बारहमासी झाड़ियों में से एक है। इसके क्षेत्र में बहुत सारी प्राकृतिक विभिन्नताएं

मेंहदी में संभावनाएं

- यह खेती न्यूनतम वर्षा में भी की जा सकती है और यह अन्य फसलों की तुलना में अधिक लाभदायक होती है।
- इसकी सूखे के प्रति सहनशीलता के कारण भी खेती की जा सकती है, जो कम लागत वाले निवेश पर सुनिश्चित आर्थिक रिटर्न देने के लिए कृषि योग्य फसल के लिए अनुपयुक्त है।
- पत्तियों का आर्थिक उत्पादन तीसरे वर्ष से शुरू होता है, जो अगले 15-30 वर्षों तक जारी रहता है।
- मेंहदी से किसान औसतन 12,450 रुपये प्रति हैक्टर का लाभ कमाते हैं।
- मेंहदी की खेती में उर्वरक, कीटनाशकों और अन्य पोषक तत्वों की न्यूनतम आवश्यकता होती है।
- आवेदन इनपुट और रखरखाव का न्यूनतम उपयोग।
- रोपण के जीवित रहने की अधिकतम संभावना।
- कीटों और रोगों का न्यूनतम संक्रमण।
- शुष्क क्षेत्र में मेंहदी फसल की प्रमुख भूमिका यह है कि यह अपनी गहरी जड़ों के कारण मृदा के कटाव को कम कर देती है।

मेंहदी की झाड़ी

उपस्थिति होने के कारण इस फसल में सुधार की गुंजाइश है। भाकृअनुप-क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, पाली में कुल चौंतीस (34) एक्सेशन शोध कार्य के लगाए गए हैं। उनमें से 23 सोजत से और 11 मारवाड़ जंक्शन से हैं। पत्ती और उपज में महत्वपूर्ण भिन्नताएं हैं। कुल एक्सेशन में सोजत-8 और सोजत-22 ने अधिक सूखी पत्ती और डाई सामग्री का क्रमशः उत्पादन किया।

नर्सरी प्रबंधन

- **बीज द्वारा प्रवर्धनः** मेंहदी के बीजों में कठोर बीज कोट होता है, जिसके कारण बीज को अंकुरित होने में अधिक समय लगता है। इसमें 20 प्रतिशत से कम अंकुरण होता है। कठोर बीज कोट को तोड़ने के लिए बुआई से पहले उपचार जरूरी होता है। इसलिए मार्च के दौरान नर्सरी में बीज बोए जाते हैं। तापमान (25 से 30 डिग्री सेल्सियस) अंकुरण के लिए सबसे अच्छा होता है। मेंहदी के बीजों को 7 से 10 दिनों तक पानी में भिगोना और उसके पानी को बार-बार बदलने से बीजों का अंकुरण 20 प्रतिशत अधिक होता है। इसके बीजों को चौबीस घंटे के लिए 3 प्रतिशत नमक के घोल में भिगोने से 60-70 प्रतिशत तक अंकुरण होता है। प्रति हैक्टर खेत में बुआई के लिए

मेंहदी के प्रकार

मेंहदी की दो वानस्पतिक किस्में हैं। पीली या हल्की-पीली पंखुड़ियां वाली अल्बा तथा गुलाबी/लाल और हल्के हरे रंग की पंखुड़ियों वाली रूब्रा। राजस्थान के अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में पीले फूल वाली मेंहदी की खेती डाई फसल के रूप में की जाती है। शायद इस तरह के वातावरण के कारण इसकी पत्तियां डाई के लिए बेहतर होती हैं। राजस्थान में पीले फूल वाली मेंहदी के बीच दो अलग-अलग फेनोटाइपिक वेरिएंट या इकोटाइप देखे गए हैं। इन्हें स्थानीय रूप से देसी और मुरालिया (मुराली या मोली) के नाम से जाना जाता है।

- **मुरालिया प्रकारः** इसमें छोटी भूरे और हरे रंग की पत्तियों के साथ कठोर नुकीली शाखाएं होती हैं।
- **देसी प्रकारः** आमतौर पर देसी प्रकार के पौधे की खेती बड़े पैमाने पर होती है। इसकी पत्तियां बड़ी होती हैं। इस फसल को मुरालिया प्रकार की फसल की तुलना में काटना भी आसान होता है। इसमें पत्ती उपज की क्षमता मुरालिया प्रकार की फसल की तुलना में अधिक होती है।

मेंहदी में कलमों द्वारा प्रवर्धन

सारणी : पॉली, मारवाड़ की अर्द्धशुष्क परिस्थितियों में मेंहदी की पत्तियों की उपज (कि.ग्रा. प्रति हैक्टर) पर गोबर की खाद का प्रभाव

गोबर की खाद	पत्तियों की उपज (कि.ग्रा. प्रति हैक्टर)
बिना गोबर की खाद	970
गोबर की खाद 5 टन प्रति हैक्टर	1099

मेंहदी के लगभग 10 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बुआई के बाद एक महीने तक मेंहदी के बीजों का अंकुरण 44 प्रतिशत से 100 प्रतिशत तक होता है।

- **कलम द्वारा प्रवर्धन:** सामान्य तौर पर बीज अंकुरण उठी क्यारी में मुश्किल नहीं है। प्रारंभिक अंकुरण के दौरान बुआई करते समय गहराई और नमी का ध्यान भी रखना चाहिए। मेंहदी के पौधे जड़ और कलम दोनों से आसानी से लगाये जा सकते हैं। आमतौर पर कुछ विकास हार्मोन का उपयोग मेंहदी में कलमों की जड़ को प्रोत्साहित करने के लिए किया जाता है अर्थात आई. बी.ए और आई.ए.ए. मेंहदी की कलम 10 से 15 सें.मी. लम्बी और तीन से चार नोड्स उपयुक्त हैं। इसे 10 मिनट तक कवकनाशी में भिगोना चाहिए। उसके बाद कलमों को आईएए या आईबीए घोल 3000 या 5000 पी.पी. एम. में डुबोना चाहिए। कवकनाशी से उपचारित कलमों को उठी हुई नर्सरी क्यारियों में लगाया जाता है। मेंहदी में वनस्पति प्रसार के लिए सबसे अच्छा समय जुलाई-सितंबर है।

मेंहदी पर सेमी-लूपर्स कीट का आक्रमण

क्षेत्रीय प्रथाएं

- **मेंहदी की रोपाई:** जुलाई और अगस्त में वर्षा के तुरंत बाद मेंहदी की रोपाई कर देनी चाहिए। रोपण से पहले, मोल्ड बोर्ड या डिस्क हल का उपयोग करके एक या दो गहरी जुताई द्वारा खेत को तैयार किया जाना चाहिए।

मेंहदी का रोपण 30×30 सें.मी. की दूरी पर किया जाता है। भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (काजरी) में परीक्षणों से पता चला है कि 45 × 30 सें.मी. की दूरी ने अधिक सूखी पत्ती की उपज दी है। इसके बाद 60 × 30 सें.मी. और इस दूरी पर यांत्रिक अंतर सांस्कृतिक संचालन और निराई-गुड़ाई संभव है। मेंहदी को कृषि वानिकी प्रणाली के तहत लगाया जा सकता है।

मेंहदी में निराई-गुड़ाई

उर्वरक प्रबंधन

हमारे देश में मेंहदी की खेती के लिए बहुत कम या किसी भी उर्वरक का इस्तेमाल नहीं किया जा रहा है। भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (काजरी) और, क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र पाली, में मेंहदी की फसल को उर्वरक प्रबंधन से बेहतर प्रतिक्रिया मिली। गोबर की खाद 5 टन प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करने पर अच्छा अंकुरण और सूखी पत्ती की उपज के साथ-साथ गुणवत्ता पर भी लाभकारी प्रभाव देखा गया है।

मेंहदी की रोपाई से पहले खेत में खाद को अच्छी तरह से मिलाया जाना चाहिए। इसके साथ में नाइट्रोजन और फॉस्फोरस भी देना जरूरी है। नाइट्रोजन उर्वरक मेंहदी की शाखाओं और पत्ती के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और फॉस्फोरस, जड़ों का निर्माण करता है। नाइट्रोजन 60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से देने में अधिक पैदावार दर्ज की गई है और शुष्क क्षेत्रों में 90 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर के बराबर आंकी गई है।

सिंचाई

मेंहदी आमतौर पर खरीफ के दौरान वर्षा फसल के रूप में उगाई जाती है। वर्षा के मौसम में पर्याप्त वर्षा या लंबे समय

मेंहदी की पत्तियां

तक सूखे के दौर के अभाव से फसल में सिंचाई फायदेमंद होती है। यदि किसान के पास सिंचाई सुविधा उपलब्ध है, तो मेंहदी की दूसरी फसल भी संभव है। यदि सिंचाई 15 से 20 दिनों के अंतराल पर होती रहे तो 2 से 3 गुना अधिक मेंहदी की पत्ती की उपज ली जा सकती है। फसल के परिपक्वता तक पहुंचने से पहले, पत्तियों में उच्च डाई सामग्री प्राप्त करने के लिए लगभग एक पखवाड़े तक असिंचित छोड़ दिया जाता है। लगातार सिंचाई से पत्तियों में डाई की मात्रा कम होने से गुणवत्ता में कमी आ जाती है।

निराई-गुड़ाई

फसल रोपाई के एक महीने के बाद कम से कम एक बार निराई-गुड़ाई की आवश्यकता होती है। प्रति हैक्टर 1.5 कि.ग्रा. की दर से एट्राजीन शाकनाशी का प्रयोग वार्षिक घास और चौड़ी पत्तियों वाले खरपतवारों को नियंत्रित करता है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

शुष्क क्षेत्रों में मेंहदी से जुड़ा कोई रोग नहीं है। दीमक, मेंहदी का प्रमुख कीट है। इसके नियंत्रण के लिए क्लोरपाइरीफॉस (10 प्रतिशत) का मृदा में प्रयोग किया जा सकता है या क्षेत्र तैयार करने के दौरान फ्यूराडॉन

पिसी हुई मेंहदी

25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर और क्लोरपाइरीफॉस या फ्यूराडॉन का मेंहदी की खड़ी फसल में छिड़काव भी कर सकते हैं। लंबे समय तक नम और बादल छाए रहने की स्थिति में सेमी-लूपर्स की संख्या बढ़ जाती है, जिसे 1.25 लीटर प्रति हैक्टर की दर से क्विनालफॉस 30 ई.सी. के पत्तियों पर छिड़काव द्वारा भी नियंत्रित किया जा सकता है।

कटाई और उपज

मेंहदी की फसल ज्यादातर सितंबर-अक्टूबर में किसानों द्वारा काटी जाती है। इस फसल की शाखाओं को 6 से 8 इंच ऊपर से काटा जाता है। फसल की कटाई मुख्य रूप से उन महिलाओं द्वारा की जाती है, जो बाएं हाथ में चमड़े के दस्ताने और दाहिने हाथ में दरांती (गैर-दांतेदार आधा चक्र) का उपयोग करती हैं। कटाई के बाद फसल को खेत में साफ जगह पर एकत्र किया जाता है और 3 से 5 दिनों तक उसको धूप में सुखाने के लिए छोड़ देते हैं। फसल को समय पर काटना सबसे महत्वपूर्ण है। यदि किसान कटाई में देरी करता है, तो पत्तियां परिपक्व होकर मृदा की सतह पर गिरना शुरू हो जाती हैं। इससे किसानों को फसल की उपज में कमी के नुकसान का सामना करना पड़ता है। इसके अलावा यदि शीघ्र कटाई होती है, तो असामयिक बारिश या नम (आर्द्र) मौसम के कारण खेत में काटी गई फसल की पत्तियों के खराब होने का खतरा रहता है।

फसल में विभिन्न कार्यकलाप

वर्षा वाले क्षेत्रों से फसल की औसत सूखी पत्तियों की पैदावार लगभग एक टन प्रति हैक्टर है। सिंचाई क्षेत्रों के तहत 2.5 टन प्रति हैक्टर तक अधिक पैदावार प्राप्त कर सकते हैं। सोजत शहर में सूखी मेंहदी के पत्तों के विशेष व्यापार के लिए एक अलग विनियमित बाजार है। मेंहदी किसान आमतौर पर इस बाजार में अपनी उपज बेचते हैं। लगभग 20 रुपये से 30 रुपये प्रति कि.ग्रा. तक लाभकारी मूल्य प्राप्त करते हैं।

भाकृअनुप की लोकप्रिय पत्रिका
'खेती' सितम्बर, 2021 अंक के प्रमुख आकर्षण

- मखाना, मछली एवं सिंघाड़ा की समन्वित खेती
- सूखा प्रभावित क्षेत्रों के लिए उपयोगी हाइड्रोजेल
- अंडमान और निकोबार द्वीप समूह की मृदाओं का अध्ययन
- बंजर भूमि में बनाएं चरागाह
- पोषक तत्वों से भरपूर अंडे के छिलके से बनी खाद
- रबी फसलों में समन्वित कीट प्रबंधन
- मीठाजल में उन्नत मोतीपालन
- मिथुन के मुंहपका-खुरपका रोग की रोकथाम
- माल्ट जौ की नई किस्म 'डीडब्ल्यूआरबी-182'
- कृषि अपशिष्टों से मुनाफा
- पशु उत्पादों में प्रतिजैविक दवाओं की जांच
- सरसों की वैज्ञानिक खेती
- दलहनी फसलों में खरपतवार प्रबंधन
- काठिया गेहूं का उत्पादन एवं उपयोग
- कार्बन उत्सर्जन को कम करती संरक्षित कृषि
- रबी फसलों की बुआई के लिए आधुनिक कृषि यंत्र
- शहद प्रसंस्करण की वैज्ञानिक विधियां
- भारत में पशु प्लेग उन्मूलन की कहानी
- कीटनाशकों का वातावरण, जल एवं भूमि पर दुष्प्रभाव
- ऊंटनी का दूध है मानव के लिए विशिष्ट आहार

संपर्क सूत्र: प्रभारी, व्यवसाय एकक, भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, कैब-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012
दूरभाष: 25843657, www.icar.org.in

बहुमूल्य सब्जी है ककोड़ा

एस.के. बैरवा*, एल.एन. बैरवा, हरीश वर्मा***, ओम प्रकाश****, आर.सी. आसीवाल****** और **अरविन्द नागर*******

कोरोना काल की परिस्थितियों एवं चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए स्वच्छ, ताजी, जैविक तथा पोषण से भरपूर सब्जियों की आवश्यकता है। मनुष्य के प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत बनाने तथा कोविड संक्रमण के दौरान सुपाच्य सब्जियों की जरूरत है। बेल वाली सब्जियां कोराना काल में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। इन सब्जियों में ककोड़ा का विशेष महत्व है, क्योंकि ये प्राकृतिक रूप से उग जाते हैं। रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग का भी प्रचलन नहीं होने के कारण यह जैविक सब्जी होती है। ककोड़ा का सेवन पेट के रोग, कैंसर, रक्त में शर्करा की मात्रा को कम करने, नेत्र रोगों के समाधान, श्वसन संबंधित रोगों में लाभदायक है।

किसानों द्वारा बहुत सी सब्जियों की खेती की जाती हैं। इनमें से कुछ बेल वाली सब्जियां प्राकृतिक रूप से स्वत: ही उग आती हैं। कददूवर्गीय कुल की सब्जी ककोड़ा, उन्हीं में से एक है। इसका वानस्पतिक नाम *मोमोर्डिका डायोका* एल. है। यह कम क्षेत्र में खेतों की बाड़ अथवा झाड़ियों के आसपास उगती है। अधिक गुणवत्ता एवं पोषक तत्वों से भरपूर जैविक सब्जी होने की वजह से ककोड़ा को स्थानीय लोग बहुत अधिक पसंद करते हैं।

नर पौधा

भारत में विभिन्न प्रकार की सब्जियां बोई जाती हैं। इसमें से कददूवर्गीय कुल एक बड़ा समूह है। इस कुल में कुछ ऐसी सब्जियां हैं, जो व्यावसायिक रूप से कम प्रचलित होते हुए भी अधिक पौष्टिक हैं और बाजार

*सहायक आचार्य; **प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (उद्यान विज्ञान), एस.के.एन. कृषि महाविद्यालय, जोबनेर (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर); ***प्रोफेसर (कीट विज्ञान) एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंन्द्र, बूंदी (कृषि विश्वविद्यालय, कोटा); ****सहायक आचार्य, कृषि महाविद्यालय, लालसोट (दौसा), एस.के.एन. कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर-जयपुर; *****विषय विशेषज्ञ (उद्यान विज्ञान), कृषि विज्ञान केंन्द्र, झालावाड़ (कृषि विश्वविद्यालय, कोटा)

फल मक्खी

इस कीट का प्रकोप फूल बनने की शुरुआत में होता है। मादा, फूलों या फल बनने की कच्ची अवस्था में अण्डे देती हैं। अण्डे देने के बाद छिद्र को गोंद जैसे चिपचिपे पदार्थ से ढक देती है। 7-8 दिनों के बाद अण्डों से लट निकलकर फल को अन्दर से खाकर खराब कर देती है। इससे फल सड़ जाते हैं तथा खाने योग्य नहीं रहते हैं। इसके नियंत्रण के लिए सर्वप्रथम कीटग्रसित फलों को तोड़कर गड्ढे में गाड़कर नष्ट कर देना चाहिए एवं 25 फैरोमेन ट्रैप प्रति हैक्टर की दर से फल आने से पूर्व लगायें। नीम आधारित कीटनाशी 0.3 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव कर या खेत में विषैले प्रलोभक (मैलाथियॉन की 10 मि.ली. मात्रा के साथ 100 ग्राम गुड़ को प्रति लीटर पानी में घोलकर) जगह-जगह उचित स्थान पर रखकर नियंत्रण किया जा सकता है।

में इनकी मांग अधिक होती है। इन्हीं में से, ककोड़ा या कंटोला एक है। इसके कच्चे एवं पूर्ण विकसित फलों की सब्जी बनाई जाती है। इसके फलों में रेशों की मात्रा अधिक होती

कंदिल जड़

मादा फूल

नर फूल

है, जो पाचन तंत्र को मजबूती प्रदान करता है। यह कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान आदि राज्यों में ककोड़ा उगाया जाता है।

ककोड़ा एक बहुवर्षीय बेल है, जिसमें नर एवं मादा पुष्प अलग-अलग बेल पर बारिश में लगते हैं। मादा बेल पर परंपरागत क्रिया सम्पन्न होने पर ही फल लगते हैं। बेल सर्दियों एवं गर्मी के मौसम में सुषुप्तावस्था में रहती है। जैसे ही बारिश की शुरुआत होती है बेल स्वत: ही खेतों की मेड़, पेड़ों के पास, झाड़ियों के आसपास उगकर फलोत्पादन देती है। कर्नाटक एवं पश्चिम बंगाल में इसकी व्यावसायिक रूप से खेती की जाती है। इसके लिए सामान्यत: विशेष सस्य क्रिया नहीं अपनायी जाती है। इसकी वैज्ञानिक तरीके से खेती करके अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

जलवायु

यह सब्जी उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु के गर्म एवं आर्द्र क्षेत्रों में आसानी से उगाई जाती है। बेल की अच्छी बढ़वार के लिए 25-40 डिग्री सेल्सियस तापमान अच्छा होता है। सर्दियों के मौसम में बेल सुषुप्तावस्था में चली जाती है, जबकि लगातार वर्षा होने पर वृद्धि प्रभावित होती है।

मृदा

लगभग सभी प्रकार की मृदा में इसको उगाया जाता है, परन्तु बलुई-दोमट मृदा जिसका पी-एच मान 6-7.5 हो, इसकी

उन्नत किस्में

इंदिरा ककोड़ा-1

फल गहरे हरे रंग के, फलों का औसत भार 14 ग्राम और फलों की तुड़ाई 75-80 दिनों में की जा सकती है। प्रथम वर्ष में औसत उपज 8-10, द्वितीय वर्ष 10-15 एवं तृतीय वर्ष में 15-20 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त की जा सकती है। यह किस्म इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर ने विकसित की है।

अर्का नीलांचल श्री

अधिक उपज वाली किस्म है, जिससे औसत उपज 4-5 कि.ग्रा. प्रति बेल तक प्राप्त कर सकते हैं। बाजार में मांग अधिक होती है। यह किस्म भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु के.बा.प., केन्द्र, भुबनेश्वर द्वारा विकसित की गई है।

अर्का नीलांचल शांति

फल का आकार मध्यम, औसत भार 20 ग्राम तथा औसत उपज 15-16 कि.ग्रा. प्रति बेल। यह ककोड़ा तथा टेसल गार्ड के संकरण से विकसित किस्म है। यह भाकृअनुप-भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु के.बा.प. केन्द्र, भुबनेश्वर द्वारा विकसित की गई है।

इसके अतिरिक्त ककोड़ा की स्थानीय या देसी प्रजातियां आदि भी प्रचलित हैं।

सारणी: ककोड़ा में पोषक तत्वों की मात्रा (प्रति 100 ग्राम खाद्य पदार्थ)

पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
ऊर्जा (कि.ग्रा. कैलोरी)	52
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	7.7
प्रोटीन (ग्राम)	3.1
वसा (ग्राम)	3.1
रेशा (ग्राम)	3.0
फॉस्फोरस (मि.ग्रा.)	42
लोहा (मि.ग्रा.)	4.6
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	33
कैरोटीन (आई.यू.)	2700
थायमीन (माइक्रोग्राम)	176.1
राइबोफ्लेविन (मि.ग्रा.)	0.18
नियासिन (मि.ग्रा.)	0.59
एस्कार्बिक अम्ल (मि.ग्रा.)	275.1

खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है। मृदा में जैविक पदार्थों की प्रचुर मात्रा तथा मृदा में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

खेत की तैयारी

पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद की 2-3 जुताइयां देसी हल को चलाकर खेत की अच्छी तैयारी कर लेनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा चलाना चाहिए, ताकि खेत में बिखरे ढेले टूट जाएं व मृदा अच्छी तरह भुरभुरी हो जाए। इसी समय खेत में सड़ी हुई गोबर की खाद 200-250 क्विंटल प्रति हैक्टर की दर से मिला लें।

प्रवर्धन

ककोड़ा का प्रवर्धन बीज एवं जड़ या उनकी कलम द्वारा होता है। बीज द्वारा पौधे तैयार होने में अधिक समय लगता है। इसके साथ ही साथ नर व मादा पौधे की

ककोड़े फल

पहचान करना भी कठिन होता है। बीजू पौधों की गुणवत्ता में भी कमी रहती है, जबकि कंदील जड़ों या उनकी कलम द्वारा मातृ पौधे के समान पौधा जल्द ही आसानी से तैयार किया जा सकता है। नर व मादा पौधों के अनुपात (10 : 1) में संतुलन भी बनाया जा सकता है।

बुआई समय

ककोड़ा की बुआई/रोपण गर्मी में फरवरी-मार्च में तथा वर्षा ऋतु में जून-जुलाई में है, जबकी पहाड़ी क्षेत्रों में अप्रैल में की जाती है। बीजों का अंकुरण लगभग 30 डिग्री सेल्सियस तापमान पर अच्छा होता है। बुआई से पूर्व बीजों को पानी में भिगोकर बोने से अंकुरण जल्दी होता है। जड़ की कलम को लगाने से पूर्व इंडोल ब्युटेरिक अम्ल 200 पी.पी.एम. से उपचारित करके लगाना लाभदायक होता है। जड़ों का पूर्व में लगी बेलों से निकालकर जमीन में दबाकर संग्रहण कर सकते हैं।

बीज दर एवं बीजोपचार

ककोड़ा की खेती के लिए 2.5-5.0 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टर की दर की आवश्यकता होती है। बीजों को बुआई से पूर्व ट्राइकोडर्मा जैविक फफूंदनाशी 6 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. से 1.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

बुआई

बुआई से पूर्व खेत में पलेवा करना चाहिए, ताकि पर्याप्त नमी के कारण बीजों का अच्छा अंकुरण हो सके। बीज की बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति के मध्य दूरी 30-45 सें.मी. तथा पौधे से पौधे के मध्य की दूरी 8-10 सें.मी. रखनी चाहिए, जबकि जड़ से तैयार पौधों के लिए गड्ढे का आकार 30 × 30 × 30 सें.मी. होना चाहिए। पौधों को एक मीटर की दूरी पर लगाना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

बुआई से पूर्व मृदा नमूने की जांच अवश्य करायें, ताकि जांच की अनुशंसा के अनुसार खाद व उर्वरकों का प्रयोग कर सकें। प्राकृतिक रूप से उगने वाली बेल में अलग से उर्वरक देने का प्रचलन नहीं है। खेत में उत्पादन की दृष्टि से नाइट्रोजन 50-60 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर देना आवश्यक है। नाइट्रोजन की मात्रा दो भागों में बुआई के 30-35 एवं 45-60 दिनों के बाद निराई-गुड़ाई करके बेलों में दें।

सिंचाई

वर्षा ऋतु में सामान्यत: सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है, जबकि गर्मी के मौसम में 5-7 दिनों के अंतराल पर नियमित सिंचाई करें या बूद-बूंद सिंचाई का प्रयोग करना चाहिए।

निराई-गुड़ाई

बेल की वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार शीघ्र ही निकाल देने चाहिए अन्यथा पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। बेलों के थावलों की दो बार निराई-गुड़ाई, पहली बुआई के 30 दिनों तथा दूसरी बुआई

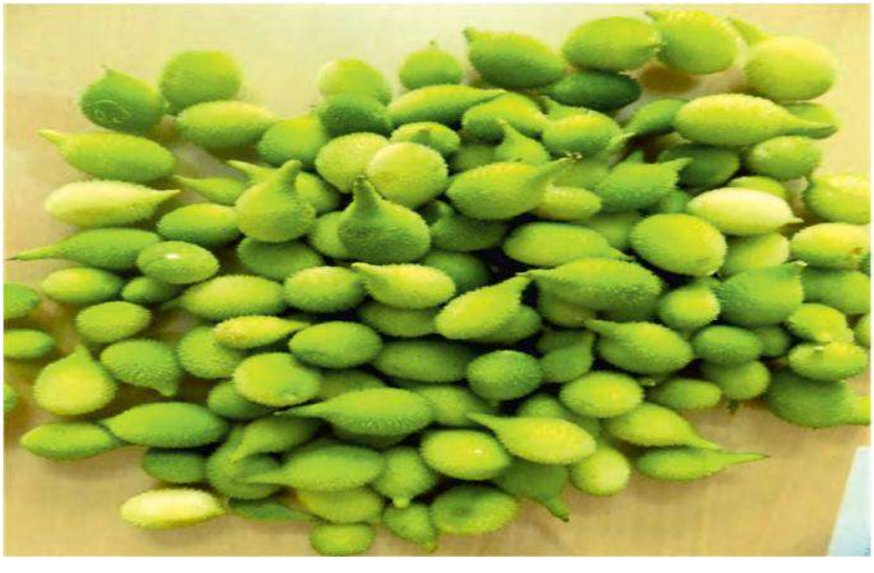

सब्जी योग्य ककोड़ा फल

के 60 दिनों बाद करनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर तीसरी निराई-गुड़ाई भी की जा सकती है।

सहारा देना

बेलों को सहारा देने के लिए बांस या लकड़ी की डंडियों की सहायता से पंडाल/मचान बनाकर बेलों को चढ़ा दिया जाता है। ऐसा करने से प्रकाश, हवा का आवागमन सुचारू हो जाता है। इसके कारण बेलों में फल एवं फूल अधिक लग पाते हैं एवं फलों की गुणवत्ता, वृद्धि एवं तुड़ाई आसान हो जाती है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

ककोड़ा में कीट एवं रोग का प्रकोप कम होता है, परन्तु कुछ कीटों जैसे-फल मक्खी एवं पर्ण सुरंग का प्रकोप पाया जाता है।

लाल भृंग

इस कीट की लट एवं प्रौढ़ अवस्था उगते हुये पौधों की पत्तियों पर छेदकर नुकसान पहुंचाती है। इसके नियंत्रण के लिए मैलाथियॉन चूर्ण 5 प्रतिशत या क्विनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण 20-25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से भुरकाव करें।

पर्ण सुरंग कीट

यह कीट पत्तियों की ऊपरी-निचली सतह के मध्य में हरे भाग को खाता है। इससे पत्तियों पर सर्पीली आकार की चमकीली सुरंगें दिखाई देने लगती हैं। इससे प्रकाश संश्लेषण क्रिया बाधित होने के फलस्वरूप उपज में कमी आती है। कीट नियंत्रण के लिए डाइमिथोएट 30 ई.सी. 0.2 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करें।

पूर्ण पके फल

फल विगलन रोग

यह रोग मृदाजनित कवकों से होता है। प्रायः इसके कवक मृतजीवी के रूप में एवं सड़े हुये फलों में पाये जाते हैं। रोग भूमि के सम्पर्क वाले फलों पर पहले होता है। सर्वप्रथम रोगी फलों का छिलका नरम तथा गलने लगता है। गले हुये भाग पर रुई के समान कवक जाल विकसित हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिए फलों को सहारा देकर भूमि के सम्पर्क में आने से बचायें। जल निकास की उचित व्यवस्था करें एवं आवश्यकता से अधिक सिंचाई न करें। कार्बेन्डाजिम + मैन्कोजेब मिश्रण का 0.2 प्रतिशत की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 15 दिनों बाद पुनः दोहरायें।

चूर्णिल आसिता

रोग की शुरुआती अवस्था में पत्तियों और तनों पर सफेद, रंग के सूक्ष्म धब्बे पौधों पर दिखाई देते हैं, जो बाद में श्वेत चूर्णिल पदार्थ के रूप में पौधे की सतह को ढक लेते हैं। अंततः यह रोग सम्पूर्ण तने व फलों पर फैल जाता है। बाद में बेल सूख जाती है। रोग से बचाव के लिए कैराथेन 0.1 प्रतिशत या सल्फेक्स 0.3 प्रतिशत का पानी में घोल बनाकर 10 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार छिड़काव करें।

एंथ्रेक्नोज

यह रोग *कोलेटोट्राइक्स लेजीनेरियम* नामक कवक द्वारा फैलता है। शुरुआती अवस्था में पत्तियों तथा फलों पर छोटे-छोटे हल्के पीले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में काले रंग के धब्बों के रूप में बदल जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए जल निकास की उचित व्यवस्था करें एवं डाइथेन एम-45 दवा का 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करें।

तुड़ाई

उत्तर भारत में फल जुलाई से अक्टूबर के मध्य आते हैं। पूर्ण विकसित एवं मुलायम बीजयुक्त कच्चे फल की तुड़ाई की जाती है। फलों की तुड़ाई 3-4 बार करते हैं।

उपज

औसत उपज 75-100 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त होती है।

भंडारण

फलों को कमरे के तापमान पर 3-4 दिनों तक ताजा रखा जा सकता है, जबकि शीतगृह में 10 दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

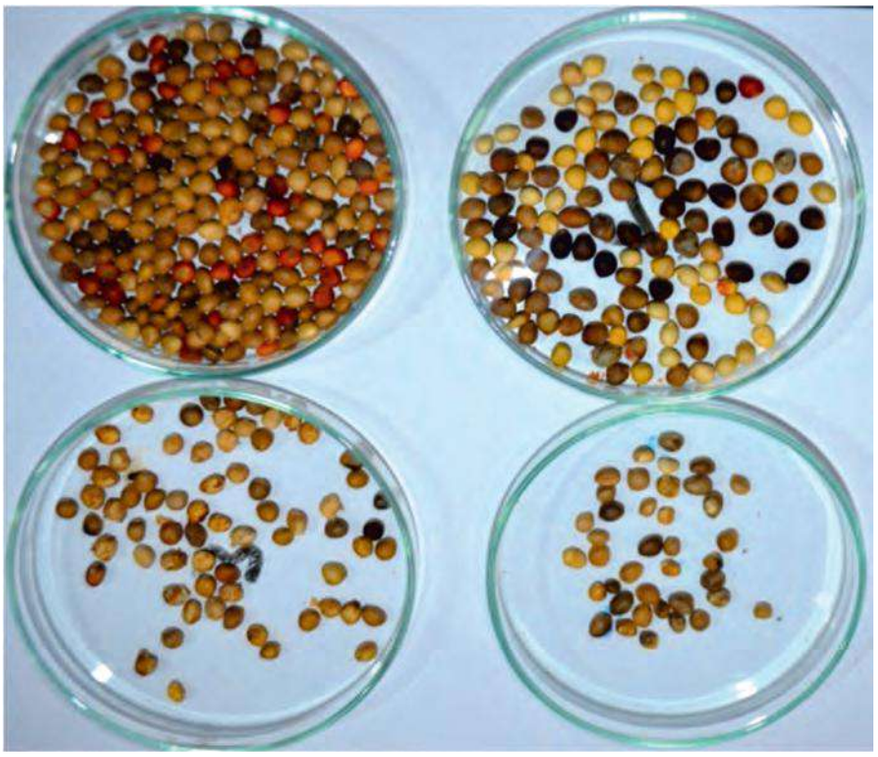

ककोड़ा के बीज

बागों में सितंबर-अक्टूबर के कार्यकलाप

हरे कृष्ण*

वर्षा ऋतु होने के पश्चात शरद ऋतु का आगमन होता है, जो सितम्बर-अक्टूबर के दौरान आता है। इस ऋतु में प्राकृतिक सौंदर्य की छटा देखते ही बनती है। इस दौरान, कई वृक्षों से फल एकत्रित किए जाते हैं। इसलिए इसे फल एकत्रित करने वाली ऋतु के रूप में भी जाना जाता है। इसके साथ ही इस मौसम में कई पेड़-पौधों में पर्णपात भी होता है। अत: इस माह को पतझड़ का महीना भी कहा जाता है। इस दोमाही में बागों में कई आवश्यक कृषि क्रियाएं करनी होती हैं, जिनका क्रमवार विवरण इस लेख में दिया गया है।

आम से पाएं धन, करें समय पर व्याधि-प्रबंधन

आम में गोदांर्ति की रोकथाम हेतु प्रति वृक्ष 50 ग्राम जिंक सल्फेट, 250 ग्राम कॉपर सल्फेट, 125 ग्राम बोरेक्स व 100 ग्राम बुझा हुआ चूना (10 वर्ष या अधिक उम्र के पौधे के लिए) मृदा में मिलाएं। वर्षा न हो तो, तुरन्त हल्की सिंचाई करें। ठीक इसी प्रकार श्यामव्रण (एंथ्रेक्नोज) रोग एवं लाल रतुआ (रेड रस्ट) से बचाव के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड की 3 ग्राम मात्रा का एक लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। सितंबर में यदि पेड़ पर प्ररोह शोथ (शूट गॉल) बनाने वाले कीट का

आम में श्यामव्रण

प्रकोप दिखता है तो मोनोक्रोटोफॉस (0.05 प्रतिशत) या डिमेथोएट (0.06 प्रतिशत) का छिड़काव करें। वृक्षों के नीचे की भूमि की सफाई अक्टूबर में करनी चाहिए। यदि बाग में खरपतवारों का प्रकोप हो, तो उन्हें निकाल देना चाहिए। यदि आवश्यक हो, तो बाग की सिंचाई भी करें। कमजोर और रोगग्रसित शाखाओं की छंटाई करें। इसके बाद ब्लाइटॉक्स-50 (3 ग्राम प्रति लीटर) के घोल का छिड़काव करें। गुच्छा रोग के प्रकोप से बचने हेतु नेफ्थलीन एसिटिक (200 पीपीएम) का छिड़काव करें। इसी माह जल के समुचित निकास के लिए

*भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-231305 (उत्तर प्रदेश)

नालियां भी बना लेनी चाहिए। जिंक की कमी के लक्षण दिखाई देने पर 0.4 प्रतिशत जिंक सल्फेट का प्रयोग करें। आम के वृक्षों में पुष्पण को विनियमित करने के लिए पैक्लोबूट्राजोल (4-5 मि.ली. कल्टार प्रति मीटर पादप छत्रक व्यास) को ड्रिप लाइन में बनी खंदकों में डालें। इस महीने के दौरान बहुधा प्ररोहमरण (डाई बैक) के लक्षण देखे जाते हैं। सूखे हिस्से से लेकर हरे भाग के 5-10 सें.मी. को काटकर अलग कर देना चाहिए। इसके बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.3 प्रतिशत) का 15 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव किया जाना चाहिए।

नए बाग लगाएं, पपीते से मुनाफा कमाएं

अक्टूबर माह पौधों की रोपाई के लिए उत्तम समय होता है। इसलिए इस माह में तैयार पौधों की रोपाई कर देनी चाहिए। बीज

पपीता

अब की बारी, केले को बाजार भेजने की करो तैयारी

मानसून में नए बाग लगाने का कार्य यदि पूरा नहीं किया हो, तो सितंम्बर-अक्टूबर में पूरा करें। इसके लिए तलवार की शक्ल के 1.5-2.0 कि.ग्रा. भार के स्वस्थ अंत:भूस्तारी का चुनाव करना चाहिए। इनसे उत्पन्न फल अच्छी गुणवत्ता के होते हैं। जहां भी आवश्यक हो, सड़े हुए अथवा अनुंकुरित अंत:भूस्तारी को बदलने के लिए रिक्त स्थानों को भरा जाना चाहिए। इस अवधि में, खीरे और चौलाई की खेती दक्षिण भारत के क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। सितम्बर में परिपक्व फलों के गुच्छों को तोड़कर भण्डार में पकाएं एवं बाजार में भेजने की समुचित व्यवस्था करें। इसी माह प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया पौधे से 50 सें.मी. दूर घेरे में प्रयोग कर हल्की गुड़ाई करके मृदा में मिला दें। अक्टूबर में अवांछित पत्तियों को निकालकर उद्यान की सफाई कर देनी चाहिए। यदि आवश्यक हो, तो हल्की सिंचाई अवश्य करें। तैयार पके हुए फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। भृंग की रोकथाम हेतु मोनोक्रोटोफॉस 1.25 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें एवं आधा कि.ग्रा. नीम की खली अथवा 250 ग्राम अरंडी की खली प्रति पौधे की दर से तने के चारों ओर मिट्टी में मिलाएं। अधिक प्रकोप होने पर डाइमेथोएट का पौधों के ग्रीवा (कॉलर) क्षेत्र के चारों ओर छिड़काव करें।

केले में फलन

सही ज्ञान से रखें बेर का ध्यान

बेर में पुष्पण और फल सैट होना

बाग की सफाई करके खरपतवार निकाल दें। अक्टूबर में बेर में चूर्णिल रोग के प्रकोप की आशंका होती है। इसकी रोकथाम के लिए केराथेन (1 मि.ली. प्रति लीटर) का छिड़काव करें। केराथेन के अतिरिक्त बाविस्टिन (0.05 प्रतिशत) अथवा सल्फर चूर्ण (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव भी किया जा सकता है। बेर में सितम्बर से पुष्पण की क्रिया शुरू हो जाती है। इसके परागकण चिपचिपे होते हैं और परागण मुख्यत: मधुमक्खियों द्वारा होता है। अत: बेर में अच्छी पैदावार सुनिश्चित करने के लिए दो मधुमक्खियों के छत्ते प्रति एकड़ रखें। इससे किसानों को फलों के साथ शहद की अतिरिक्त आमदनी भी हो सकेगी।

से तैयार अथवा ऊतक संवर्धित पौधों को 1.8 मीटर की दूरी पर खुदे हुए 45X45X45 सें.मी. आकार के गड्ढों में रोपित करना चाहिए। रोपण के तुरंत पश्चात सिंचाई अवश्य करें। इसके बाद प्रत्येक 2-3 दिन पर सिंचाई करें, जब तक कि पौधा पूर्ण रूप से स्थापित न हो जाए। द्विलिंगी किस्मों जैसे-पूसा ड्वार्फ, पूसा जायंट, पूसा नन्हा, पंत पपीता, कोयंबटूर 1, 2, 7 आदि के कम से कम तीन पौधे एक-दूसरे से 15 सें.मी. की दूरी पर प्रति गड्ढा लगाएं। उभयलिंगी किस्मों जैसे-पूसा डिलिशियस, पूसा मजेस्टी, कुर्ग हनी-ड्यू आदि का एक पौधा प्रति गड्ढा लगाएं। विदेशी किस्मों में सोलों, सनराइज, सिन्टा और रेड लेडी प्रमुख हैं। रेड लेडी के एक पौधे से 100 कि.ग्रा. तक पपीता पैदा होता है। सड़न रोग से बचाव हेतु जल निकास की उचित व्यवस्था रखें व बोर्डो मिश्रण (2.5 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

अमरूद में उर्वरक देना

पुराने बागों में फलों की तुड़ाई के बाद खाद की समुचित व्यवस्था करें। गोबर की खाद की दूसरी खुराक 25 कि.ग्रा. और नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश प्रत्येक की

अमरूद में थैलाबंदी

0.5 कि.ग्रा. मात्रा प्रति पेड़ देनी चाहिए। उपज बढ़ाने के लिए यूरिया 1 प्रतिशत और जिंक सल्फेट 0.5 प्रतिशत का छिड़काव करें। फलों की थैलाबंदी एक और महत्वपूर्ण कृषि कार्य है। यह एक आसान और सस्ती तकनीक है, जिसे आसानी से अपनाया जा सकता है। अमरूद को पकाने और गुणवत्ता में सुधार हेतु सामान्य अखबारी कागज द्वारा फसल की तुड़ाई से एक माह पूर्व अथवा फल सैट होने के 30 से 50 दिन के भीतर जब फल बेर के आकार (डेढ़ से दो इंच) के हों, थैलाबंदी की जा सकती है। थैलाबंदी फलों को रोगों और पक्षियों से होने वाली क्षति से भी बचाती है। यदि बागों में तनाभेदक की समस्या हो, तो छेद को साफ करके उनमें पेट्रोल से भीगी रूई या छेद को चिकनी मिट्टी से बंद कर दें, ताकि कीट मर जाएं। स्टूलिंग या गूटी से तैयार पौधे को पौधशाला में लगाएं।

यदि फलों पर फाइटोफ्थोरा फलगलन के लक्षण दिखें तो डाइथेन जेड-78 या रिडोमिल का 0.2 प्रतिशत की दर से अथवा कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करें। बोरॉन की कमी (पत्तियों के आकार में कमी और फलों का सख्त होना तथा फटना) को दूर करने के लिए पुष्पण तथा फल सैट होने के दौरान 0.3 प्रतिशत बोरेक्स का पर्णीय छिड़काव करें। विगत ऋतु के विकसित प्ररोहों को 10-15 सें.मी. की लंबाई तक छांट दिया जाना चाहिए। अक्टूबर में पके फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें तथा खरपतवारों को निकाल कर उद्यान की सफाई करें।

लीची की निगरानी, बढ़ाए आमदनी

अगस्त में यदि रोपण का कार्य पूर्ण न हुआ हो, तो यह कार्य सितंबर में अवश्य पूर्ण कर लें। सितंबर में ही गूटी द्वारा तैयार किए गए पौधों को पेड़ से अलग कर पौधशाला में स्थापित करना चाहिए। इस दौरान, यदि पत्तियां कांसे के रंग की दिखने लगें, तो 25 ग्राम जिंक सल्फेट को प्रति वृक्ष की दर से मिट्टी में मिलाएं। सितंबर-अक्टूबर के दौरान, लीची के बागों में खाद एवं उर्वरक देने की व्यवस्था करें। लीची के एक वर्ष के पौधे के लिए 5 कि.ग्रा. गोबर/कम्पोस्ट खाद, 50 ग्राम नाइट्रोजन, 25 ग्राम फॉस्फेट व 50 ग्राम पोटाश, जो बढ़कर क्रमशः 10 वर्ष या उससे अधिक उम्र के पौधे के लिए 50 कि.ग्रा. गोबर/कम्पोस्ट खाद, 500 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फेट तथा 500 ग्राम पोटाश प्रति पौधे की दर से प्रयोग करें। इसी अवधि में, बागों में हल्की जुताई करें ताकि खरपतवार का प्रकोप कम हो तथा मृदा में समुचित वातन हो सके।

पुराने बागों में बहुधा तनाछेदक कीट की समस्या रहती है। इसलिए, सितम्बर में इस कीट की रोकथाम के लिए अमरूद में सुझाई गई विधि का पालन करें। सितंबर में पत्ती खाने वाले भृंग से बचाव के लिए बुप्रोफेजीन (1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें। इसी प्रकार, अक्टूबर में छाल खाने वाली इल्ली की रोकथाम के लिए, क्लोरोपायरीफॉस (2 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें। यदि तांबे की कमी के लक्षण (पत्तियों का छोटा होना) दिखाई दें तो अक्टूबर में 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से कॉपर सल्फेट का 15 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें। लीची में पुष्पण को प्रेरित करने के लिए, एथरेल 150 पी.पी.एम. के 3 से 4 छिड़काव अक्टूबर से दिसंबर के बीच करें अथवा सितंबर के प्रथम पखवाड़े तक लीची के प्राथमिक प्ररोहों पर 2-4 मिलीमीटर चौड़े वलयन बनाएं।

पत्ती खाने वाले भृंग से लीची को हानि

अनार की मनुहार, लाये बागों में बहार

सितंबर-अक्टूबर के दौरान ही हस्त बहार की फसल में पुष्पण होता है। पुष्पण की प्रारम्भिक अवस्था में ही 0.25 प्रतिशत जिंक सल्फेट, आयरन सल्फेट, मैंगनीज सल्फेट एवं 0.2 प्रतिशत बोरॉन का पर्णीय छिड़काव करें। जिससे उत्पादकता तथा गुणवत्ता में वृद्धि होती है और साथ ही फलों का फटना भी कम होता है। इस माह 6 वर्ष या अधिक आयु के पौधों में प्रति पौध, खाद और उर्वरक की तीसरी मात्रा (10 कि.ग्रा.

अंगूर की निगरानी, ना बरतें असावधानी

अंगूर में श्यामव्रण

इस अवधि के दौरान, फलों की तुड़ाई के पश्चात अंगूर की बेलों को खाद व उर्वरक देने की समुचित व्यवस्था करें। सितम्बर में भी श्यामव्रण रोग के नियंत्रण के लिए, बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव करें। दक्षिण भारत में अंगूर की बेलों की छंटाई की व्यवस्था करनी चाहिए। अक्टूबर में अंगूर के बाग की सफाई कर, इसे खरपतवार मुक्त रखें। हल्की सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई अवश्य करें।

बाजार जाएगा कटहल

अक्टूबर में तैयार हो चुके फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। इसी माह फलों से बीज निकालकर पौधशाला में बुआई करें। चूर्णिल रोग का प्रकोप होने पर डाइथेन एम-45 (2 ग्राम प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करें। मिलीबग कीट की रोकथाम के लिए वृक्षों पर आम की भंति पॉलीथीन लगाएं।

अनार में पुष्पण

गोबर की खाद, 200 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस एवं 400 ग्राम पोटाश) दें। सितम्बर में मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। सामान्यत: 20 लीटर पानी प्रति पौध ड्रिप सिंचाई विधि द्वारा देना चाहिए। सितंबर में खरपतवार और जमीन के नीचे से निकलने वाले अंकुरों को निकाल दें। बैक्टीरियल ब्लाइट, कवक रोगों और हानिकारक कीटों से बचने के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (0.5 ग्राम प्रति लीटर जल में) मैंकोजेब 75 घुलनशील चूर्ण (2 ग्राम प्रति लीटर जल में), में टीपोल या ट्वीन 20 (0.5 मि.ली.प्रति लीटर की दर से) का छिड़काव करें। अक्टूबर में खरपतवार और जमीन के नीचे से निकलने वाले अंकुरों को निकाल दें। मृदा की स्थिति, प्रकार,पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। इन महीनों के दौरान थ्रिप्स का प्रकोप भी चरम पर होता है। इसके नियंत्रण के लिए फिप्रोनिल/ इमिडाक्लोप्रीड/ लैम्डा सायहाइलोथ्रिन का पुष्पण छिड़काव करें। अक्टूबर में फलबेधक और फल चूसने वाले कीटों का प्रकोप बढ़ जाता है। इसलिए, इस दौरान, फलों की थैलाबंदी और पौधों को जालों से ढक देना चाहिए तथा डाइमेथोएट का छिड़काव करें।

चीकू

सितम्बर में दीमक से बचाने के लिए क्लोरोपाइरीफॉस (2 मि.ली. प्रति लीटर जल में) का छिड़काव करें। खरपतवार और जमीन के नीचे तथा मुख्य शाखा के निचले हिस्से से निकलने वाले अंकुरों को निकाल दें। अक्टूबर में बाग में मरे हुए पौधों की जगह नए पौधे लगाएं। मूलवृंत से निकलने वाली

नाशपाती, आड़ू, खुबानी व आलूबुखारा

गोंदार्ति से प्रभावित आड़ू का तना

आड़ू, खुबानी और आलूबुखारा आदि के पौधों के तनों को नीले थोथे से पोत दें। गोंदार्ति से बचाव हेतु बोरेक्स (0.4 प्रतिशत) का छिड़काव करें। अक्टूबर में उद्यान को खरपतवारमुक्त रखने के लिए सफाई करें। जड़छेदक कीट की रोकथाम के लिए क्लोरोपायरीफॉस के चूर्ण का प्रयोग पौधे के चारों ओर करें। आड़ू के पत्तीमुड़न रोग की रोकथाम के लिए प्रभावित पत्तियों को तोड़कर जला देना चाहिए। कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (300 ग्राम प्रति 100 लीटर) अथवा कार्बेंडाजिम (50 ग्राम प्रति लीटर) के घोल का छिड़काव करें।

चीकू

शाखाओं को निकाल दें। किसान बाग की बची हुई खाली जगह में सब्जियां इत्यादि लगा कर अतिरिक्त आय पा सकते हैं। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। पौधे की आयु के अनुसार फॉस्फोरस और पोटाश दें। खरपतवार को निकालते रहें। बाग में साफ-सफाई बनाए रखें, ताकि कीटों से होने वाली हानि से बचा जा सके। मुख्य तुड़ाई होने के पश्चात पौधों पर जो फल आते हैं, उन्हें हटा देना चाहिए।

इस द्विमासी, करें अनन्नास में जल निकासी

सितम्बर में अनन्नास में रोग या कीट से ग्रस्त भागों और पौधों को इकट्ठा करके

अनन्नास का बगीचा

नष्ट कर देना चाहिए। खरपतवार को हटाना चाहिए और बागों में पलवार का प्रबंध करें, जिससे मृदा में पर्याप्त नमी बनी रहे एवं खरपतवार भी नियंत्रित रहें। बाग की खाली बची हुई जगह में सब्जियां इत्यादि लगा कर अतिरिक्त आय पाई जा सकती है। फलों की सुरक्षा के लिए थैलाबंदी लाभदायक होती है। सूरज के प्रकाश से जली हुई, जमीन पर गिरी हुई पत्तियों और क्षतिग्रस्त फलों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए।

अक्टूबर में अनन्नास फसल के अवशेषों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। बारिश बहुत अधिक होने पर पौधरोपण नहीं करना चाहिए। अतिरिक्त जल की निकासी की व्यवस्था करनी चाहिए। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। पौधे की आयु के अनुसार फॉस्फोरस और पोटाश दें।

तन्मयता से करें निगरानी, सुरम्यता लाये स्ट्रॉबेरी

सुरम्य, सुवासित स्ट्रॉबेरी

मैदानी भागों के किसान सितम्बर में खेत की अच्छी तरह जुताई करके एवं गोबर आदि खाद मिला करके 10 × 3 × 0.5 फीट आकार की क्यारियां तैयार कर लें, ताकि अक्टूबर के अंतिम सप्ताह में पौधे लगाए जा सकें। खेत तैयार करने से पहले 40-50 टन प्रति हैक्टर की दर से गोबर की गली-सड़ी खाद डाल लें। इसके बाद खेत की जुताई करें। बाग लगाने हेतु अक्टूबर के अंत या नवम्बर के शुरू में उद्यान में स्ट्रॉबेरी के पौधों की रोपाई करें।

2 प्रतिशत नीम के तेल का छिड़काव करें। जिन फसलों में कीट तथा रोग कम लगते हैं, उन्हें बाग की सीमा के पास लगाएं।

आंवले का पेड़, मांगे विशेष देखरेख

यदि नए बाग अगस्त के अंत तक न लग पाए हों, तो सितम्बर के शुरू में यह कार्य समाप्त करें। आंवला में फल सड़न रोग की रोकथाम के लिए ब्लाइटॉक्स का 3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। शुष्क विगलन रोग, जिसमें 80-90 प्रतिशत फल अन्दर से काले होकर अक्टूबर/नवम्बर में गिर जाते हैं, की रोकथाम के लिए 6 ग्राम बोरेक्स प्रति लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें। छाल खाने वाले कीट की रोकथाम के लिए मिट्टी के तेल या पेट्रोल में रुई भिगोकर तार की सहायता से छेदों में डालकर चिकनी मिट्टी से बन्द करें। शूट गॉल बनाने वाले कीट से ग्रस्त टहनियों को काटकर जला दें।

अक्टूबर में आंवले के बाग में सिंचाई की नालियां बनाएं। इस माह तनाछेदक कीट के प्रकोप की समस्या भी संभव है, जिसकी रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफॉस (3 मि.ली.प्रति लीटर पानी में) का छिड़काव करें। नियमित रूप से 20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करने से फलों की अच्छी वृद्धि होती है। इन्हीं महीनों में आंवले के बाग में खाद व उर्वरक भी देना चाहिए। आंवले के दस वर्ष पुराने वृक्ष में लगभग 800 ग्राम नाइट्रोजन, एक कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट तथा 1-1.5 कि.ग्रा. पोटाश प्रतिवर्ष की दर से दें। उपरोक्त उर्वरकों की आधी मात्रा अक्टूबर में देनी चाहिए। उर्वरकों के अतिरिक्त 30-40 ग्राम गोबर की खाद प्रतिवृक्ष की दर से भी अवश्य दें। यह खाद 15-20 कि.ग्रा. प्रतिवृक्ष की दर से देनी चाहिए।

परागण की समुचित व्यवस्था, लोकाट सुदृढ़ करे अर्थव्यवस्था

नए बाग लगाने का कार्य सितम्बर में हर हाल में पूरा कर लिया जाना चाहिए। पुराने बागों में पुष्पण की क्रिया शुरू हो जाती है। अत: किसी कीटनाशी का प्रयोग न करें, नहीं तो परागणकर्ता प्रभावित होंगे, ये बाद में परागण की क्रिया को प्रभावित करेंगे और अंतत: फलन भी कम होगा। लोकाट की किस्मों गोल्डन येलो के लिए बगीचे में कैलिफोर्निया एडवांस किस्म को परागण के रूप में लगाना चाहिए। उपरोक्त किस्मों में स्वपरागण क्षमता नहीं है।

नीबूवर्गीय फल में व्याधि एवं कीट निदान, पोषण का रखें भरपूर ध्यान

कैंकर रोग से छुटकारा पाने के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) और नीम खली (5 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। पर्णसुरंगी कीट से बचाव के लिए पौधशाला में डाइमेथोएट (0.05 प्रतिशत) अथवा नीम के तेल का छिड़काव करें। फलों की तुड़ाई-पूर्व गिरना एक गंभीर समस्या है। इसलिए सितम्बर में 10 पी.पी.एम. 2,4-डी (1 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव अवश्य करें। सितम्बर में नाइट्रोजन की तीसरी मात्रा पौधों को अवश्य दें। इन फल वृक्षों में लगभग सभी सूक्ष्मतत्वों की विशेष कमी पाई जाती है। इसकी पूर्ति के लिए जिंक सल्फेट, मैग्नीशियम सल्फेट, बोरिक अम्ल, बुझा हुआ चूना (प्रत्येक एक कि.ग्रा. प्रति 450 लीटर पानी) आदि के संयुक्त घोल का छिड़काव करें। इस घोल में यदि 5 कि.ग्रा. यूरिया डाल लें तो यह नाइट्रोजन की कमी को पूरा करता है।

अक्टूबर में बाग की एक बार जुताई करना आवश्यक तथा लाभप्रद होता है। इस माह यदि कैंकर की समस्या हो तो स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (500 पी.पी.एम.) का छिड़काव करें। नवम्बर में तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें तथा उद्यान की सफाई करके उसे खरपतवारमुक्त रखें। इसके बाद निराई-गुड़ाई भी अवश्य करें। यदि फल के झड़ने की समस्या हो, तो 2, 4 डी (8-10 पी.पी.एम.) का छिड़काव करें।

सेब की देखभाल, करे मालामाल

रूईया एवं सेंजोस स्केल आदि कीटों की रोकथाम के लिए वसंत के प्रारम्भ में 2 प्रतिशत हॉर्टीकल्चर मिनरल ऑयल का छिड़काव करें। सितम्बर में कीटभक्षी *कोक्सिनेला सेप्टमपुंकटाटा* (30-50 वयस्क प्रति ग्रसित वृक्ष) को बागान में छोड़ें। सितम्बर में डाइमेथोएट (0.01 प्रतिशत) का छिड़काव करें। फलों को तुड़ाई पूर्व गिरने से रोकने हेतु 20 पी.पी.एम. नेफ्थलीन एसिटिक अम्ल (2 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव सितम्बर में अवश्य करें। देर से पकने वाली

तुड़ाई को तैयार सेब

किस्मों के तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। अक्टूबर में ही बीजू पौधे तैयार करने के लिए फलों से बीज निकालकर इनकी बुआई पौधशाला में कर देनी चाहिए। इस माह तने के विभिन्न रोगों का प्रकोप होने पर ब्लाइटॉक्स-50 के घोल का छिड़काव करें।

खजूर की देखभाल

यदि किसी कारणवश जुलाई-अगस्त के दौरान खेतों में रोपण का कार्य पूरा न किया जा सका हो, तो यह कार्य सितंबर में पूर्ण कर लें। इसी माह में खजूर में खाद और उर्वरक देने का कार्य करना चाहिए। सूखी, रोगग्रस्त या अवांछनीय पत्तियों को काटकर अलग कर लेना चाहिए। अच्छे उत्पादन के लिए, सकर्स को काटकर अलग कर लें। यदि भूस्तारी की अभिवृद्धि करनी हो, तो छोटे भूस्तारियों पर मिट्टी चढ़ाने का कार्य पूर्ण कर लें। ■

परिषद की पत्रिकाओं की सदस्यता व नवीनीकरण हेतु फॉर्म

प्रिय ग्राहकों

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्रकाशित विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं की सदस्यता प्राप्त करने हेतु अनुरोध है कि आप पत्रिकाओं का वार्षिक सदस्यता शुल्क 'व्यवसाय प्रबंधक, भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद, नई दिल्ली' के नाम देय बैंक ड्राफ्ट या NEFT द्वारा भेजने की व्यवस्था करें। इस प्रकार आपको पत्रिकाएं सुचारू रूप से मिलती रहेंगी और आप कृषि, बागवानी, पशुपालन, मछली पालन व अन्य सम्बद्ध क्षेत्रों में किये जा रहे अनुसंधान कार्यो से विकसित उन्नत तकनीकों को अपनाकर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर अपनी आय दोगुनी कर सकेंगे। परिषद की विभिन्न चयनित पत्रिकाओं के लिए नीचे दिए गए बॉक्स में चिन्ह (✓) लगाएं। पत्रिकाओं का वार्षिक सदस्यता निम्न है:-

पत्रिकाओं का नाम	वार्षिक शुल्क	
खेती (मासिक)	रु. 300	☐
फल फूल (द्विमासिक)	रु. 150	☐
इंडियन फार्मिंग (अंग्रेजी मासिक)	रु. 300	☐
इंडियन हॉर्टिकल्चर (अंग्रेजी द्विमासिक)	रु. 150	☐

रिसर्च जर्नल	व्यक्तिगत		संस्थागत	
इंडियन जर्नल ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज (अंग्रेजी मासिक)	रु. 1000	☐	रु. 3000	☐
इंडियन जर्नल ऑफ एनिमल साइंसेज (अंग्रेजी मासिक)	रु. 1000	☐	रु. 3000	☐

उपरोक्त चिन्हित (✓) पत्रिकाओं। रिसर्च जर्नल की अग्रिम धन राशि रुपये .....
का एन.ई.एफ.टी./आर.टी.जी.एस. या बैंक ड्राफ्ट संख्या न. .....दिनांक.....बैंक का नाम एवं कोड.....भेज रहें हैं, कृपया स्वीकार करें ।

नाम.....

पूरा पता.....

.....

पिन कोड.....फोन न. अथवा मोबाइल न. .....ई-मेल.....

प्रकाशन मंगवाने की नियमावली

1. कृपया अपने ऑर्डर के साथ अपना नाम, पता, डाकघर आदि का पूर्ण विवरण, पिन कोड नंबर के साथ अवश्य लिखें।
2. भुगतान ''व्यवसाय प्रबंधक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली'' के नाम बैंक ड्राफ्ट द्वारा भेजें।
3. आरटीजीएस (RTGS) तथा एनईएफटी (NEFT) द्वारा ऑनलाइन अग्रिम भुगतान के लिए निम्नलिखित जानकारी देखें:-

	पुस्तकों के लिए	पत्रिकाओं और जर्नल के लिए
संस्था का नाम व पता	DKMA Revolving Fund Scheme	परियोजना निदेशक (DKMA)
बैंक का नाम	सिंडिकेट बैंक (केनरा बैंक)	सिंडिकेट बैंक (केनरा बैंक)
बैंक का पता	कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012	कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012
आईएफएससी कोड	SYNB0002413	SYNB0002413
एमआईसीआर संख्या	110025166	110025166
चालू खाता संख्या	24131010000043	24133050000040

PFMS Unique Code : **DLND00001925 भारत सरकार एवं परिषद के संस्थानों के लिये।**

नोट: कृपया एनईएफटी/आरटीजीएस से अग्रिम राशि भेजने के पश्चात हमें पत्र अथवा ई-मेल businessuniticar@gmail.com द्वारा अपने नाम व पते के साथ अपनी मांगी गई पुस्तकों, पत्रिकाओं एवं जर्नल के नाम और अवधि NEFT/RTGS नम्बर, राशि एवं बैंक का नाम इत्यादि सूचित करना आवश्यक है।

संपर्क सूत्र

प्रभारी, व्यवसाय एकक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा, नई दिल्ली-110012

दूरभाष: 91-11-25843657 (D) 25841993 (Extn. 657 & 220)

ई-मेल: businessuniticar@gmail.com

वेबसाइट: www.icar.org.in

बिहार के वैज्ञानिकों ने ईजाद की आम की नई किस्म

बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर भागलपुर के वैज्ञानिकों ने आम की एक नई किस्म को विकसित किया है। इसको 'सबौर मैंगो-2' नाम दिया गया है। आम की इस प्रजाति के फल में छिलका पतला और गुठली बहुत छोटी होती है। स्वाद में यह मालदा और आम्रपाली का संकर है। बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर में आम की बागवानी और उसकी प्रजातियों को लेकर खूब प्रयोग किये जा रहे हैं। दो प्रजातियों को मिलाकर आम की नई प्रजाति भी पैदा की जा सकती है, बीएयू के वैज्ञानिक यह चमत्कार पहले भी कर चुके हैं। विश्व की पहली आम की संकर किस्म यहीं विकसित की गई थी। इसको 'प्रभाशंकर' और 'महमूदबहार' नाम दिया गया था। हालिया विकसित आम की किस्म 'सबौर मैंगो-2' यहां की एक और बड़ी उपलिब्ध है। आम की यह प्रजाति आकर्षक चमकीले पीले रंग के छिलके वाली होती है। इसकी मिठास 20.5 फीसदी

(टीएसएस) और इसमें 80 फीसदी गूदा होता है। इसका बीज बहुत पतला होता है। इसका पेड़ सामान्य रूप से 30 फीट ऊंचाई तक जाता है। एक पेड़ से 130 कि.ग्रा. फल मिलते हैं। बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर के उद्यान विभाग (फल और फल विज्ञान) के वैज्ञानिकों के अनुसार 'सबौर मैंगो-2' राज्य में आमों की 60 फीसदी खेती को खराब कर चुकी रेड बैंडेड कटर पिलर रोग प्रतिरोधी है। लंगड़ा और आम्रपाली के मिलन से पैदा की गई, इस संकर आम को गुच्छा रोग और रेड बैंडेड कटर पिलर रोग भी नुकसान नहीं पहुंचा पाएंगे। ■

जीआई प्रमाणित 'जलगांव केला' की पहली खेप दुबई निर्यात

भौगोलिक संकेत (जीआई) प्रमाणित कृषि उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देते हुए, फाइबर और मिनरल से समृद्ध 'जलगांव केला' की एक खेप हाल ही में दुबई निर्यात की गई है। महाराष्ट्र के जलगांव जिले के तंदलवाड़ी गांव के प्रगतिशील किसानों ने 22 मीट्रिक टन जीआई प्रमाणित 'जलगांव केले' की उपज प्राप्त की है। यह इलाका कृषि निर्यात नीति के तहत पहचाने गए केले के उत्पादन का प्रमुख कृषि क्षेत्र है। वर्ष 2016 में, जलगांव केले को जीआई प्रमाणीकरण मिला, जो निसारगर्जा कृषि विज्ञान केंद्र (केवीके) जलगांव में पंजीकृत था। वैश्विक मानकों के अनुरूप कृषि पद्धतियों को अपनाने के कारण भारत का केला निर्यात तेजी से बढ़ रहा है। देश से वर्ष 2018-19 में 1.34 लाख मीट्रिक टन केले का निर्यात हुआ था, जिसकी कीमत 413 करोड़ रुपये थी। वर्ष 2019-20 में निर्यात बढ़कर 1.95 लाख मीट्रिक टन हो गया, जिसकी कीमत 660 करोड़ रुपये थी। वर्ष 2020-21 (अप्रैल 2020-फरवरी 2021) में, भारत

ने 619 करोड़ रुपये मूल्य के 1.91 लाख टन मूल्य के केले का निर्यात किया। भारत कुल केला उत्पादन में लगभग 25 प्रतिशत की हिस्सेदारी के साथ दुनिया में केले का सबसे बड़ा उत्पादक है। आंध्र प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, केरल, उत्तर प्रदेश, बिहार और मध्य प्रदेश देश में केले के उत्पादन में 70 प्रतिशत से अधिक का योगदान करते हैं। कृषि और प्रसंस्करित खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) अपनी योजना के विभिन्न घटकों जैसे-बुनियादी ढांचा विकास, गुणवत्ता विकास और बाजार विकास के तहत निर्यातकों को सहायता प्रदान करके कृषि और प्रसंस्करित खाद्य उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा देता है। ■

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की लोकप्रिय मासिक हिंदी पत्रिका

खेती

- निरंतर 73 वर्षों से प्रकाशित आपकी अपनी लोकप्रिय हिंदी मासिक पत्रिका **खेती** में खेती-बाड़ी के आधुनिक तौर-तरीकों, पशुपालन की उन्नत विधियों, कृषि वानिकी, औषधीय पौधों की खेती तथा प्रगतिशील किसानों की सफलता गाथाओं से जुड़े अनुभवी कृषि वैज्ञानिकों के लेखों को अत्यंत सरल भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस जानकारी का लाभ किसान भाई अपनी कृषि आय बढ़ाने के लिए उठा सकते हैं।
- संपूर्ण रंगीन पृष्ठों से सुसज्जित इस प्रतिष्ठित पत्रिका में **'अगले माह के कृषि कार्यकलाप'** तथा 'कृषि खबरें, देश विदेश की' जैसे अत्यंत उपयोगी नियमित स्तंभ भी हैं जो रोचक होने के साथ नई जानकारियां भी प्रदान करते हैं। यही नहीं विभिन्न किसानोपयोगी विषयों पर पत्रिका के विशेषांकों का भी समय-समय पर प्रकाशन किया जाता है।

पत्रिका मूल्यः

एक प्रति : 30 रुपये, वार्षिक सदस्यता शुल्क : 300 रुपये

संपर्क सूत्रः

प्रभारी, व्यवसाय एकक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन-1, पूसा गेट, नई दिल्ली-110012

दूरभाष : 011-25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in

डा. एस. के. सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादकः अशोक सिंह